संसार चक्र की गति प्रगति

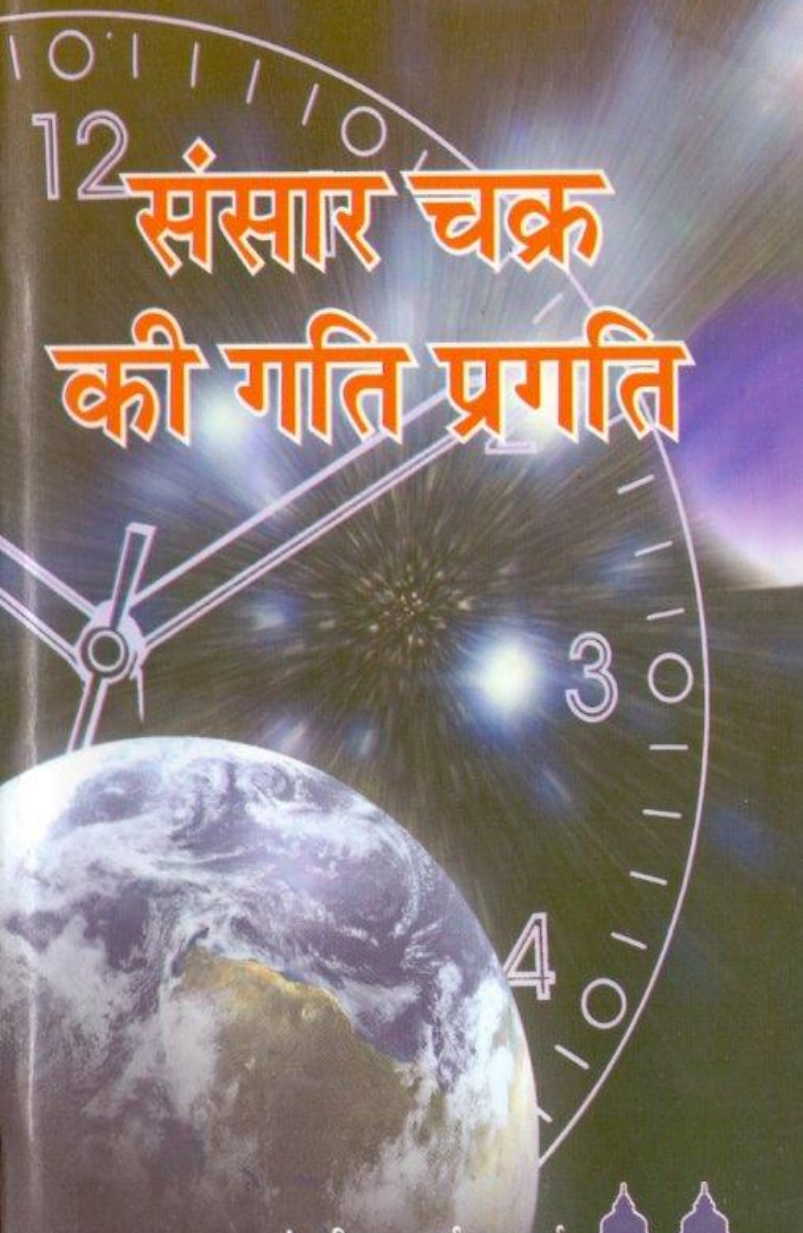

संसार चक्र की गति-प्रगति

लेखक :
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९
मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९
फैक्स नं०- २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् **२०१३** **मूल्य : २२.०० रुपये**

विषय-सूची

१.	जीवन के इस विस्तार में मनुष्य कहाँ?	३
२.	मनुष्य से भी महान कहीं कुछ है	२२
३.	अन्य ग्रहों पर उन्नत सभ्यताएँ भी	३६
४.	जानें या न जानें, सच तो सच है	५१
५.	जन्म-मरण और विकास का सर्वव्यापी चक्र	६६
६.	दिव्य लोकों से बरसने वाला शक्ति-प्रवाह	८८
७.	क्षुद्रग्रह चले बड़े इठलाते	१०४

.....अनुमानों में कहाँ, कितनी सत्यता है, कहा नहीं जा सकता। पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि मानवीय विधान की अपेक्षा ईश्वरीय विधान अधिक शक्तिशाली है। यहाँ न मनुष्य की भौतिक सामग्री साथ देती है और न बुद्धि-कौशल। न तकनीक काम देती है और न साइंस। उसे जानने के लिए तो अपने जीवन के दृष्टिकोण को ही बदलना पड़ता है। अपनी तुच्छता स्वीकार करनी पड़ती है और महाकाल की महाशक्तियों पर विश्वास करना पड़ता है। जब इस तरह की ज्ञानबुद्धि जाग्रत होती है, तो मनुष्य के कल्याण का मार्ग निकलने लगता है।

.....मानवीय सत्ता अनंत आकाश की तरह सुविस्तृत है। उसके ऊँचे पटल क्रमशः धूल, धुंध, और सघन भारीपन से युक्त होते जाते हैं और अंततः वह स्तर आ जाता है, जिसमें ब्रह्म के प्रकाश और प्रभाव को अधिक स्पष्टतापूर्वक देखा, समझा जा सके।

जीवन के इस विस्तार में मनुष्य कहाँ?

न्यू हैंपशायर का एक पुलिस स्टेशन—बात ३ सितंबर सन् १९६५ की है, में नारमैन मसकेरीलो नामक व्यक्ति ने प्रवेश किया। पुलिस स्टेशन में यों घबराहट से भरे अनेक व्यक्ति पहुँचते हैं और रिपोर्ट दर्ज कराते हैं, पर मसकेरीलो की मुखमुद्रा में व्याप्त भय बहुत गहरा था। आपबीती सुनाते समय उसका मुँह पूरी तरह सूख रहा था। कई बार तो घबराइट के मारे आवाज भी रुँध जाती।

काँपते स्वर में उसने बताया—वह वस्तु गोल थाली की तरह चमकती हुई थी। उसका रंग सफेद था, पर किरणें-सी फूट रही थीं, वह लाल या नारंगी थीं। प्रकाश का यह गोला काँप रहा था। उसमें मक्खी के भिनभिनाने की-सी आवाज थी।

पर वह कौन था? पुलिस इंस्पैक्टर ने प्रश्न किया और साथ-ही-साथ सांत्वना भी दिलाई, तब मसकेरीलो ने आगे बताना शुरू किया। "मैं अपने घर जा रहा था, समय पता न चलने के कारण जल्दी ही चल पड़ा था। कोई सवारी नहीं मिली, सो पैदल ही आ रहा था। जब मैं केसिंग्टन के एक खुले स्थान से गुजर रहा था, तभी आकाश में वह गोल-सी वस्तु, जिसका व्यास ८० से ९० फीट तक रहा होगा, काँपती हुई मेरी ओर झपटी। सड़क छोड़कर मैं नीचे की ओर भागा, तब वह पीछे लौट गई और हवा में उड़ती हुई मकानों की छतों पर घूमी। इसके आगे मुझे पता नहीं। मैं सीधा पुलिस स्टेशन भागकर आया हूँ। मुझे डर लग रहा है, घर तक पहुँचने का प्रबंध कर दें।" इंस्पैक्टर के लिए यह सर्वथा अनहोनी घटना थी।

कहते हैं कि साइबेरिया में कोई एक व्यक्ति ऐसा है, जो शुक्र ग्रह से उतरा है। कहते हैं कि बेल्जियम में कोई एक ऐसा स्थान है, जहाँ आकाश से प्राय: उड़न तश्तरियाँ आती रहती हैं। भूत-प्रेतों की कहनी-अनकहनी तो घर-घर सुनी जा सकती हैं, पर जो कुछ मसकेरीलो बता रहा था, वह सत्य तो वैज्ञानिक कहानियों से भी आश्चर्यजनक था। उस पर सहसा विश्वास करना कठिन था। इंस्पैक्टर ने हँसकर कहा भी-महोदय! आपको लगता है धोखा हो गया।

किंतु अभी वह कुछ व्यवस्था करे, इससे पूर्व ही रात्रि में गश्त (पैट्रोल) के लिए गई पुलिस की गाड़ी वापस लौटी। उसके इंचार्ज वरट्रेंड ने भी बताया कि थाने से दो मील दूर कार में आ रहे एक दंपती ने भी ठीक ऐसी ही घटना सुनाई, जैसी मसकेरीलो ने। उन्हें यों उस वस्तु ने नौ मील तक ईपिग से न्यू हैंपशायर के उस स्थान तक पीछा किया, जहाँ वह वस्तु मसकेरीलो को मिली थी।

आखिर सत्यता की जाँच के लिए वरट्रेंड तैयार हो गया। उसने मसकेरीलो को भी साथ लिया और उसी स्थान पर जा पहुँचा। टार्च से बड़ी देर तक इधर-उधर देखते रहे, पर वहाँ कुछ दिखाई न दिया। वरट्रेंड ने व्यंग्य से कहा—आपने कोई पास से गुजरता हैलीकोप्टर देखा होगा। 'पर मुझे हवाई जहाजों की पूर्ण पहचान है'—मसकेरीलो ने उत्तर दिया और तभी वह घटना फिर घटी। वहाँ से कुल १०० गज की दूरी पर ही एक 'कृषि भवन' था। उसके ऊपर वह प्रकाशपुंज फिर प्रकट हुआ। वहाँ की प्रत्येक वस्तु, पेड़-पौधे और जमीन तक उसी रंग से नहा गए। कृषि भवन तो रक्त के रंग में रँगा लगने लगा। वरट्रेंड सहित सभी पैट्रोल-कार की ओर भागे।

उस प्रकाशपुंज की कहानी यहीं से समाप्त हो गई। दूसरे दिन वह घटना अखबारों में छपी। तब जान फुलर नामक लेखक ने

अनेक व्यक्तियों से पूछताछ कर लिखा कि यह घटना विलक्षण सत्य थी और विज्ञान के लिए चुनौती भी। ७३ लोगों ने उसे देखा और सबके बयान एक ही थे, जो २०० पृष्ठों में टाइप किए गए थे। इस तरह की घटनाओं का संकलन करने वाली संस्था 'नेशनल इन्वेस्टीगेशन कमेटी' एयरियल फेनामेना वाशिंगटन ने भी उसकी पुष्टि की। श्रीमती विरजिनिआ, जो हैंपटन में पत्रकार थी, ने भी उसे देखा था और उसकी पुष्टि भी की थी। पर क्या यह प्रकाशपुंज कोई आत्मा थी, भूत या कोई सूक्ष्मशरीर? यह अब तक निश्चित नहीं हो सका।

अब तक कई ऐसे यान अपने आकाश में उड़ते और पृथ्वी तल पर उतरते देखे-पाए गए हैं। परीक्षण के बाद इन्हें सचाई के रूप में स्वीकार किया गया है। इन अंतरिक्ष यानों को उड़न तश्तरी ही कहा जाता है।

सन् १९३० ई० में 'प्लूटो' ग्रह की खोज करने वाले अंतरिक्ष विज्ञानी क्लाइड डब्ल्यू टांबा ने भी पिछले दिनों कहा था—"मैंने व मेरी पत्नी ने उड़न तश्तरियाँ आकाश में उड़ती देखी हैं। इंग्लैंड के अंतरिक्ष वैज्ञानिक एच० पर्सी विल्किस ने ५० फुट व्यास की उड़न तश्तरियाँ देखने का विवरण दिया था। वैज्ञानिक सिल्योर हेस ने एरिजोना क्षेत्र में धातुनिर्मित और ईंधनचालित एक उड़न तश्तरी देखने की बात कही। जर्मनी के राकेट विशेषज्ञ हरमन ओवर्थ ने भी उड़न तश्तरियों की बावत महत्त्वपूर्ण जानकारियों के संचित होने की घोषणा की थी।"

ब्राजील की वायुसेना द्वारा १९५५ ई० में सार्वजनिक रूप से प्रकाशित प्रतिवेदन के अनुसार भी उड़न तश्तरियों को देखा-परखा गया था। कनाडा सरकार की ओटावा स्थित अनुसंधानशाला के निर्देशक विल्वर्ड स्मिथ ने उड़न तश्तरियों के ठोस प्रमाण होने की बात कही थी।

अर्जेंटीना के वैज्ञानिक मार्क्स ग्युएकी तथा कई अफसरों ने कारडोवा विमानतल के पास दो उड़न तश्तरियाँ देखीं। दो रूसी वैज्ञानिक कैजेन्त्सेव तथा एग्रेस्त भी उनके अस्तित्व की घोषणा कर चुके हैं। स्वीडन के अनेक लोगों ने उड़न तश्तरियाँ देखीं, जिनका विवरण ११ जुलाई १९४६ के अंक में 'रेजिस्तेन्स' नामक फ्रेंच अखबार ने छापा था और स्टाकहोम के 'ल-मांद' अखबार ने भी इसके विवरण छापे थे। प्रख्यात ब्रिटिश पत्र 'डेलीमेल' के प्रतिनिधि ने स्वीडन व डेनमार्क का दौरा कर, पाया कि इन देशों में अनेक संभ्रांत नागरिकों ने उड़न तश्तरियाँ प्रत्यक्ष देखी हैं तथा यहाँ के फौजी अफसर भी इस बात को लेकर चिंतित थे कि कहीं इन उड़न तश्तरियों से कोई खतरा पैदा न हो।

अमेरिकी कमांडर मैक्लाफलिन के प्रतिवेदन के अनुसार उड़न तश्तरियाँ किसी अन्य ग्रह के बुद्धिमान प्राणियों द्वारा प्रेषित विमान हैं। इनका औसत आकार ४० फुट चौड़ा और १०० फुट लंबा पाया गया है। गति २५ हजार मील प्रति घंटा तथा उड़ने की ऊँचाई २ लाख फुट देखी गई। अमेरिकी वैज्ञानिकों के एतद् विषयक सम्मेलन में जनरल ममफोर्ड ने इन उड़न तश्तरियों को अत्यंत शक्तिशाली निरूपित किया।

१९६१ ई० में केपकेनेडी अंतरिक्ष केंद्र से पोलारिस नामक राकेट उड़ने के तुरंत बाद उस पर एक 'अज्ञात वस्तु' ने भयंकर झपट्टा मारा। यह प्रहार रडार ने नोट किया। राकेट का वैज्ञानिकों से संपर्क ही इस प्रहार के कारण टूट गया। बहुत प्रयास के बाद १४ मिनट पश्चात उसे खोजा, देखा जा सका। इसी तरहका एक झपट्टा ब्यूनस आयर्स के ऐजेजिया विमान अड्डे के पास 'पेनिग्रा डी० सी० ८, नामक जेट वायुयान पर मारा गया। सरकारी विज्ञप्ति में इन घटनाओं पर परदा डालने के प्रयास किए गए, पर प्रत्यक्षदर्शी तथ्य जानते ही थे। न्यू मैक्सिको

के प्रक्षेपणास्त्र अधिकारी श्री स्टोक्स ने ऊलामागोर्दो के पास एक भीमकाय यंत्र अपनी कार के पास से उड़ते हुए देखा। १८ जून १९६३ को कैलीफोर्निया में जेट विमानों का एक उड़न तश्तरी ने पीछा किया। केनबरा (आस्ट्रेलिया) में अनेक लोगों ने एक लड़खड़ाता-सा लाल रंग का प्रकाश-पिंड देखा। लिस्बन की वेधशाला ने एक बार उड़न तश्तरियों का आक्रमण नोट किया। ऐसे ही अनेक प्रामाणिक विवरण उड़न तश्तरियों की वास्तविकता पर प्रकाश डालते हैं।'

अखबारों में समय-समय पर छपने वाले ये विवरण भी महत्त्वपूर्ण हैं—

(१) ४ अक्टूबर १९६७ को हजारों लोगों ने कनाडा के समुद्री तट 'शाका हार्बर' पर एक विशालकाय अग्नि-पिंड को आकाश से उतरते देखा। यह पिंड समुद्र में प्रविष्ट हो गया।

(२) ब्रिटेन विक्टोरिया जलयान के नाविकों द्वारा माल्टा के पास तीन चमकदार उड़न तश्तरियाँ समुद्र से निकलकर अंतरिक्ष में उड़ती, जाती देखी गईं।

(३) पादरी विर्कर लीरिया ने आकाश से प्रकाश विमान द्वारा एक देवदूत आता देखा। कैथोलिक चर्च ने इस तथ्य की पुष्टि की।

(४) पेरिस के पास एक अँधेरी रात में पौन घंटे तक एक नीली रोशनी वाला प्रकाश-पिंड घुमड़ता रहा। अनेक लोगों ने इसे स्पष्ट देखा।

(५) लिस्वन के निकट काविया में चार म्यूमिनी में एक बार बच्चों ने देवमानवों के साथ भेंट की। इसके विवरण छपे।

(६) क्वारोवल के पास एक उड़न तश्तरी उतरी और समुद्री पोशाक जैसे वस्त्रों वाले दो व्यक्ति उसमें से निकले। हजारों लोगों ने उन्हें देखा।

(७) कोइंफ्रा यूनीवर्सिटी के वैज्ञानिक अलमीदा गैरत के इस विवरण का ७ हजार दर्शकों ने समर्थन करते हुए साक्षी दी कि एक भयंकर अंतरिक्ष यान वहाँ से गुजरा।

(८) अमेरिकी जलयान अलास्का पर सवार वैज्ञानिक राबर्ट एस० क्राफर्ड ने सेतल के समीप समुद्र से २५० फुट व्यास का एक पिंड निकलकर अंतरिक्ष में उड़ते देखा। इस पिंड पर तोपें दागने की भी सतर्क नाविकों ने तैयारी कर ली थी।

(९) अंतरिक्ष शोधक एंड्रयू ब्लाजम की प्रकाशित डायरी में अनेक प्रकाश-पिंडों के धरती पर आवागमन के विवरणों का संग्रह है।

(१०) रेवरेंड विलियम वूथ गिल, डा० के० हाउस्टन मेजर डोनाल्ड की हो जैसे प्रतिष्ठित व्यक्तियों द्वारा उड़न तश्तरियों की आँखों देखी गतिविधियों का वर्णन है।

इनके साथ ही विश्व भर में हजारों लोगों ने उड़न तश्तरियों से संबद्ध प्रत्यक्ष दर्शन पर आधारित विवरण दिए हैं, जो उड़न तश्तरियों के आकार-प्रकार एवं गतिविधियों पर प्रकाश डालते हैं।

'फेट' नामक प्रतिष्ठित पत्रिका में मार्शल ने वर्जीनिया व मैनबोरो नामक स्थान में एक ऐसे ही आकाश यान के अपने पास से गुजरने का विवरण लिखा है।

'उड़न तश्तरियों की खोज' नामक पुस्तक में लेखक एम० के० जेसप ने ऐसी अनेक घटनाएँ साक्षियों के साथ प्रस्तुत की हैं—

(१) लेनिनगार्ड के जंगली नाले के पास ही तीन प्रकाश-पिंडों का देखा जाना।

(२) चीन सागर में ब्रिटिश जलपोत कैरोलीन के कप्तान नारकाक द्वारा दो प्रकाश नौकाओं का दो घंटे तक देखा जाना।

(३) स्काटलैंड में इक्वनिस नगर में घनी अँधेरी रात में दो प्रकाश-गोलकों की लगातार धमा-चौकड़ी।

(४) चेल्सड्रीप में तीव्र वेग से दो आलोक प्रवाहों की परिक्रमा।

(५) वेनिस नगर में रात्रि में एक घंटे तक बादलों के बीच दो प्रकाश पुंजों की लगातार भाग-दौड़।

(६) जान फिलिप वेसर द्वारा देखी गई उड़न तश्तरियों का वर्णन।

(७) ब्रिटिश जलपोत लिएंडर के नाविकों द्वारा सात घंटे तक समुद्री सतह पर एक प्रकाश-पिंड का परिभ्रमण देखना।

पहले तो इन उड़न तश्तरियों के विवरण उपेक्षित ही रहे। पर जब 'डेली मिरर' तथा 'न्यूयार्क टाइम्स' जैसे प्रख्यात पत्रों ने इनके विवरण विस्तार से छापे, तो दुनिया भर में हलचल मच गई। विश्व भर में उड़न तश्तरियों के अस्तित्व के संबंध में विभिन्न पहलुओं की सत्यता की परख के लिए एक संस्था वाशिंगटन में गठित की गई—'निकैप' ('नेशनल इन्वेस्टीगेशन कमेटी आन एरियल फिनामिना')। इसमें इस विषय से संबंधित विशिष्ट जानकारी रखने वाले दुनिया के ५ हजार व्यक्ति सदस्य हैं। इस कमेटी ने विशाल सामग्री संबद्ध विषयों पर एकत्रित की है। ये प्रामाणिक विवरण हैं और हजारों प्रतिष्ठित व्यक्तियों की साक्षियाँ हैं। इनमें से मुख्य ये हैं—

(१) कप्तान विलियम ने अमेरिकी पत्रकारों को जानकारी दी कि २४ फरवरी १९५९ की रात्रि जब डी० जी० ६ विमान पेन्सिलवेनिया से डिट्राएट की ओर उड़ता जा रहा था, तीन उड़न तश्तरियाँ सहसा उसके सामने आईं और देर तक विमान के चारों ओर चक्कर काटती रहीं, मानो अध्ययन कर रही हों। सहसा एक तीव्र झटके के साथ वे विलीन हो गईं, उसी अनंत आकाश में जहाँ से आती दीखी थीं। कई अन्य हवाबाजों ने भी यह घटना देखी।

(२) अमेरिका में मेडीसन विल केंटुकी की पुलिस को जुलाई १९४८ ई० में एक दिन खबर मिली कि गाडमैन विमान तल के आस-पास एक विशालकाय उड़न तश्तरी उड़ रही है। कप्तान थामस मेंटल के नेतृत्व में तीन एफ० ५१ लड़ाकू विमान उड़न तश्तरी का पीछा करने भेजे गए। कप्तान रेडियो संपर्क द्वारा लगातार सूचना देते रहे कि उड़न तश्तरी दिख रही है। वह हमें पीछा करते जान गई है और तेजी से भाग रही है। हम उनका पीछा ३६० मील की गति से कर रहे हैं। यदि २० हजार फुट की ऊँचाई तक भी वे पकड़ में न आईं तो हम लौट आएँगे।

पीछे के दो विमान तो लौट आए, पर कप्तान मेंटल का विमान जो आगे था, नहीं आया। दो साथी विमान चालकों ने लौटकर यही खबर दी कि कप्तान का विमान भी उड़न तश्तरियों के साथ ही गायब हो गया। इस घटना पर अमेरिकी सरकार ने दो वर्ष तक कोई टिप्पणी नहीं की। फिर मौन तोड़ा और मात्र यह कहा—मेंटल संतुलन खो बैठे और उनका विमान नष्ट हो गया।

(३) २३ नवंबर १९५३ सुपीरियर लेक के ऊपर एक विशाल उड़न तश्तरी के उड़ने की रडार से जानकारी मिली। किनरास हवाई अड्डे से मौंकला किल्सन एफ० ८९ जेट के साथ उसका पीछा करने उड़ा। रडार पर दिखता रहा कि जेट तेजी से उड़न तश्तरी का पीछा कर रहा है और उसके पास पहुँच रहा है। फिर सहसा दृश्यांकन बंद हो गया। न उड़न तश्तरी दिख रही थी और न जेट। खोजी दल गए, जेट का मलवा तलाशने की कोशिश की, पर कहीं भी कोई सुराग नहीं मिला। इस रहस्य पर परदा ही पड़ा रहने दिया गया।

(४) मई १९६७ में कालरैडो हवाई अड्डे के रडार ने भी एक उड़न तश्तरी की उड़ान की सूचना दी।

अमेरिकी सरकार द्वारा स्थापित अनुसंधान समिति के एक सदस्य ने इन यानों की संभावना के समर्थन में एक पुस्तक लिखी है—'उड़न तश्तरियाँ? हाँ'।

'नेचर' पत्रिका में अमेरिकी रेडियो खगोलवेत्ता प्रो० कोनाल्ड ब्रैस बैल का एक लेख छपा है, जिसमें यह संभावना व्यक्त की गई है कि उड़न तश्तरियाँ किसी विकसित सभ्यता वाले तारे से सूचनायान के रूप में आई हों और यहाँ के विवरण अपने केंद्रों को भेज रही हों।

अंतरिक्ष भौतिकी के वैज्ञानिक श्री वै वैलेस सलीवान ने एक पुस्तक लिखी है—'वी आर नाट एलोन'—'हम अकेले नहीं'। इसमें ब्रह्मांड व्यापी संचार साधन पर बल देते हुए एक नई 'वेवलेंग्थ' प्रस्तुत की है, जो प्रकाश की गति से कई गुनी तीव्र होगी। यह वेवलेंग्थ पद्धति २१ सेमी० अथवा १४२० मेगासाइकिल फ्रिक्वेंसी के रेडियो कंपनों पर आधारित है। अणु-विकिरण की यह स्वाभाविक कंपन गति है। उनके अनुसार अंतरिक्ष संचार व्यवस्था में इसी गति को अपनाने से अन्य लोकों के प्राणियों से संपर्क साधा जा सकता है। हमारे लिए जो दूरी पार करनी कठिन या असंभव लगती है, संभव है अन्य लोकवासी विकसित पद्धति के कारण वह दूरी सरलता से पार कर लेते हों, ऐसा श्री सलीवान का अनुमान है।

इस धरती पर उल्लेखनीय प्रगति तो विगत तीन वर्षों में ही हुई है। उसके पूर्व तो हमारे यहाँ भौतिक पिछड़ापन अत्यधिक था। विचार, आदर्श और समाज-व्यवस्था की दृष्टि से तो अभी भी व्यापक पिछड़ापन ही है। ऐसी स्थिति में अन्य लोगों के वे निवासी जो सचमुच प्रगतिशील होंगे, हमारी दयनीय दशा के प्रति आकर्षित क्योंकर होंगे? यहाँ से संपर्क साधने का प्रयास वे क्योंकर करेंगे?

यह तो संभव है कि वे अनेक अन्य लोकों का अध्ययन करने के साथ ही इस पृथ्वी लोक की भी छान-बीन करते हों, किंतु यहाँ

के लोक-जीवन से उनके आकर्षित होने और संपर्क साधने की इच्छा करने की संभावना अत्यल्प ही है।

उधर 'साइंस' और 'दि न्यू साइंटिस्ट' पत्रों के स्तंभ लेखकों का कहना है कि उड़न तश्तरियाँ निश्चय ही अन्य ग्रहों से आने वाले संदेशवाहक हैं। अन्य लोकों के प्राणी भी ब्रह्मांड में प्रगतिशीलता के संवर्द्धन की दृष्टि से संपर्क के लिए उत्सुक हो सकते हैं।

डॉ० एस० मिलर और डॉ. विलीले की मान्यता है कि इस विशाल ब्रह्मांड में एक लाख से अधिक ग्रह-पिंडों पर प्राणियों के अस्तित्व की संभावना है। इनमें से सैकड़ों हम पृथ्वीवासियों से अधिक विकसित हैं।

अन्तरिक्षविज्ञानी डा० फानवन का कथन है कि इस विशाल ब्रह्मांड में ऐसे प्राणियों का अस्तित्व निश्चित रूप से विद्यमान है, जो मनुष्यों से बहुत अधिक समुन्नत हैं।

अन्य ग्रहों के निवासी मनुष्यों जैसी आकृति-प्रकृति के ही हों, यह भी कतई जरूरी नहीं। वे वनस्पति, कृमि-कीटक, झाग, धुआँ जैसे भी हो सकते हैं और विशाल दैत्यों जैसे भी। हमारे पास जो इंद्रियाँ हैं, उनसे सर्वथा भिन्न प्रकार के ज्ञान तथा कर्म साधन उनके पास हो सकते हैं।

कैलीफोर्निया के रेडियो एस्ट्रानामी इंस्टीट्यूट के निर्देशक डा० रोनाल्ड एन० ब्रेसवेल ने विभिन्न आधारों द्वारा अन्य ग्रह-तारकों में समुन्नत सभ्यताओं का अस्तित्व सिद्ध किया है और कहा है कि वे पृथ्वी से संपर्क स्थापित करने का सतत प्रयास कर रहे हैं एवं इस हेतु संचार उपग्रह भेज रहे हैं। उनके अनुसार फुटबाल जैसे इन उपग्रहों में अनेक रेडियो यंत्र एवं कंप्यूटर लगे रहते हैं और इनमें सचेतन जीवसत्ता भी उपस्थित रहती है। इन उपग्रहों द्वारा हमारे लिए विशेष रेडियो संदेश भी भेजे जाते हैं। इन्हें अभी तक

सुना तो गया है, पर समझ पाना संभव नहीं हो सका है। बहरहाल उड़न तश्तरियों के संचालकों ने पृथ्वीवासियों की छेड़छाड़ को पसंद नहीं किया है।

दस वर्षों में १३७ उड़न तश्तरी वैज्ञानिकों को प्राण गँवाने पड़े हैं। कभी किसी विज्ञान-क्षेत्र के शोधकर्त्ताओं की मृत्यु दर इतनी नहीं रही।

अंतरिक्ष में लेसर व क्वासर यंत्रों की स्थापना द्वारा लोकांतरों के संकेतों का ग्रहण-विश्लेषण तथा उन तक संकेत-संप्रेषण का कार्य सहज हो सकता है। तब अंतरिक्ष में विकसित सभ्यताओं का पता लगने की संभावना बढ़ जाएगी।

ऐसी स्थिति में विश्व-ब्रह्मांड के सुविकसित प्राणियों में पारस्परिक एकता एवं आत्मीयतापूर्ण आदान-प्रदान विकसित होने की संभावना है। तब क्षुद्र संकीर्णताओं की आपा-धापी का घटियापन स्पष्ट हो जाएगा और मात्र इसी शरीर को जीवन का रूप, सर्वत्र मानकर भौतिक सुखों के संचय एवं उपयोग की उन्मत्त दौड़, लज्जास्पद प्रतीत होगी। विश्व बंधुत्व का विकास होगा और विज्ञान अध्यात्मवाद से प्रभावित होगा। मनुष्य-मनुष्य के बीच स्नेह-सौहार्द्र सुदृढ़ होंगे।

अन्यत्र भी है जीवन

मनुष्य की अदम्य जिज्ञासा इस प्रयत्न में संलग्न है कि वह धरती की परिधि में ही कूपमंडूक की तरह सीमाबद्ध न रहकर यह जाने कि अनंत आकाश में कहाँ क्या है ? खगोल विद्या का विकास-विस्तार इसी आधार पर संभव हुआ है। चंद्रमा तक मनुष्य पहुँच चुका। उसका भूमि पर झंडा पहुँच चुका। वहाँ क्या है और क्या नहीं ? यह जान चुका। इस प्रयास में उसे भारहीनता में रहने, गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र में प्रवेश प्राप्त करने एवं उससे निकलने अंतरिक्षीय परिस्थितियाँ जानने जैसी अगणित ऐसी जानकारियाँ प्राप्त हुईं, जो

धरती पर रहते हुए उपलब्ध नहीं हो सकती हैं। इस प्रयास का अभी प्रत्यक्ष लाभ कुछ बहुत बड़ा प्रतीत न होता हो, पर जो ज्ञान-संचय किया गया है, वह भावी मानवी प्रगति के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा, यह निश्चित है।

इस सुविस्तृत ब्रह्मांड में हम पृथ्वी निवासी ही बुद्धिमान प्राणी हों, ऐसी बात नहीं है। असंख्य ग्रह-पिंडों में अवश्य ही ऐसे लोग होंगे, जहाँ मनुष्य से भी अधिक बुद्धिमान प्राणी निवास करते हों। हम जिस प्रकार अन्य ग्रहों की खोज-खबर लेने के लिए अपने मानव सहित और मानव रहित यान आएदिन भेजते रहते हैं, उसी प्रकार यह भी स्वाभाविक है कि उन विकसित ग्रहतारकों के निवासी पृथ्वी की परिस्थितियों का पता लगाने के लिए अपने यान भेजते हों।

कभी-कभी ऐसे यान अपने आकाश में उड़ते-उतरते देखे भी गए हैं, जिन्हें पृथ्वी निवासियों ने नहीं भेजा है। वे दृष्टिभ्रम भी नहीं थे। जाँच-पड़ताल के उपरांत उन्हें सचाई के रूप में स्वीकार किया गया है। इन यानों की उपस्थिति और उनकी हलचलों से इस विश्वास को बहुत बल मिला है कि अन्य लोकों में भी बुद्धिमान प्राणी मौजूद हैं और वे भी हमारी ही तरह ब्रह्मांड व्यापी परिस्थितियों को जानने एवं जहाँ बुद्धिमान प्राणी मिलें, वहाँ संपर्क स्थापित करने के लिए उत्सुक हैं। समय-समय पर देखे गए ऐसे अंतरिक्षीय यान जिन्हें 'उड़न तश्तरी' कहा जाता है, इस तथ्य को साक्षी रूप में परिपुष्ट करते हैं।

जर्मनी के राकेटविशेषज्ञ हरमन ओवर्थ उन दिनों अमेरिका सरकार के अत्यंत गोपनीय प्रक्षेपास्त्र शोधकार्य में संलग्न थे। उन्होंने एक भरी सभा में उड़न तश्तरियों के अस्तित्व का समर्थन ही नहीं किया, वरन यहाँ तक कह डाला कि इस संबंध में कितनी ही महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ सरकार के पास हैं। उन्होंने इसके संबंध में

विस्तृत प्रकाश डाला और बताया कि वे 'एप्सिलोन एग्डैनी' और 'ताओसेटि' तारकों के किसी ग्रह से आती हैं।

फ्रांस के 'रैसिस्तैन्स' पत्र में स्वीडन में अनेक लोगों द्वारा देखी गई उड़न तश्तरियों का विस्तृत विवरण अपने ११ जुलाई १९४६ के अंक में विस्तारपूर्वक प्रकाशित किया था। स्टाक होम में ऐसी ही ज्योतियाँ देखी गईं, उनका विवरण 'लामोन्द' समाचार ने 'रहस्यमय ज्योति बम' नाम देकर प्रकाशित किया था। ब्रिटेन के 'डेली मेल' ने अपना प्रतिनिधि इन समाचारों का पता लगाने भेजा, उसने स्वीडन तथा डेनमार्क के फौजी अफसरों तक को इस चिंता से ग्रसित पाया कि कहीं उड़न तश्तरियाँ कोई खतरा तो उत्पन्न नहीं करने वाली हैं। इन देशों के अनेक संभ्रांत नागरिक आँखों देखे विवरण का साक्षी रूप से प्रस्तुत करते हुए उड़न तश्तरियों के स्वरूप की बात स्पष्ट कर रहे थे।

केनेथ आरनल्ड का वह विवरण अनेक पत्रों में छपा था, जो उसने अपने वायुयान के निकट नौ उड़न तश्तरियों का एक जत्था आँखों से देखने के पश्चात् प्रकाशित कराया था।

जनसाधारण द्वारा अनेकों बार खुले आकाश में विचरण करती हुई उड़न तश्तरियाँ देखी गईं हैं। एक-दो ने नहीं, वरन असंख्यों ने उन्हें इन्हीं आँखों से देखा है। इनके समाचार समय-समय पर अखबारों में छपते रहे हैं।

उड़न तश्तरियों के अस्तित्व संबंधी पक्ष-विपक्ष के प्रमाण एकत्रित करने के लिए एक अंतरराष्ट्रीय संस्था वाशिंगटन में गठित हुई, जिसका नाम है "नेशनल एन्वेस्टिगेशन कमेटी आन एरियल फिनामिना" इसका संक्षिप्तीकरण है—'निकैप' इससे संबंधित विषय में दखल रखने वाले विशेषज्ञों को ही सदस्य बनाया गया है। संसार भर में उनकी संख्या पाँच हजार के लगभग है। उसने जो प्रमाण-सामग्री एकत्रित की है, वह एक महापुराण जितनी है। इनमें से जो

अधिक महत्त्वपूर्ण था, उसका प्रकाशन भी हुआ है। जो नहीं छापे जा सके, वे घटनाक्रम भी अपने ढंग के अनोखे हैं और उन्हें प्रस्तुत करने वाले ऐसे नहीं हैं, जिन्हें सिरफिरे अथवा गपबाज कहकर झुठलाया जा सके।

जो साक्षियाँ इन प्रकाशपुंज आकाशीय पिंडों के संबंध में प्राप्त हुई हैं, उनमें से एक-चौथाई वायुसेना के ऐसे प्रतिष्ठित पदाधिकारियों की हैं, जिन्हें गपबाजी फैलाने का दोषी कदाचित् ही कोई ठहरा सके। कुछ घटनाएँ तो ऐसी हैं, जिनमें उन्हीं पर मुसीबत टूटी। ६ नवंबर १९५७ को ओटावा के आकाश में वास्काटांग झील के ऊपर रात्रि के ९ बजे एक उड़न तश्तरी देखी गई। उसने उस क्षेत्र का रेडियो संचार नष्ट करके रख दिया। शार्ट-वेव और मीडियम वेव दोनों ही बेकार हो गए। केवल किट-किट की आवाज रिसीवरों पर सुनी जाती रही। जो संभवत: उस उड़न तश्तरी की हरकतों की ही रही होगी। शायद वह अपने लोक को कोई संदेश भेज रही हों। पुन: संचार तब आरंभ हुआ, जब उनका आतंक समाप्त हो गया।

अंतरिक्षीय यानों के धरती पर आवागमन की इन साक्षियों से हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि इस ब्रह्मांड में हम मनुष्यों की अपेक्षा कहीं विकसित सभ्यताएँ मौजूद हैं। हमारे उड्डयन ज्ञान एवं साधनों की अपेक्षा वे कहीं आगे हैं। यदि ब्रह्मांड-व्यापी चेतन सत्ता पारस्परिक सहयोग के आधार पर आदान-प्रदान का द्वार खोल सके, तो दूरवर्ती ग्रहतारकों के भी निकटवर्ती पड़ोसी बनकर रहने की सुखद परिस्थितियाँ प्राप्त हो सकती हैं। विज्ञान ने इस पृथ्वी पर रहने वाले सुदूरवर्ती। लोगों को यातायात साधनों के आधार पर एक गली, मुहल्ले में रहने वालों की तरह बना दिया। अब अंतर्गृही सहयोग एवं आदान-प्रदान का द्वार खुलने की बारी है।

एक ओर अंतर्गृही सहयोग के प्रयास और दूसरी ओर मनुष्य का अधिकाधिक संकीर्णतावादी स्वार्थपरायण बनते जाना, कैसी है यह विचित्र विडंबना।

उड़न तश्तरियों के कतिपय प्रश्न

क्या इस निखिल ब्रह्मांड में एकमात्र पृथ्वी ही मनुष्य जैसे बुद्धिमान प्राणियों की क्रीड़ास्थली है अथवा किसी अन्य ग्रह-नक्षत्र में ऐसे ही जीवधारियों का अस्तित्व है? यदि है तो क्या उनका परस्पर मिलन एवं सहयोग संभव है? इस प्रश्न पर जितना अधिक विचार किया गया है, उतना ही इस निष्कर्ष पर अधिक विश्वासपूर्वक पहुँचा गया है कि इस असीम ब्रह्मांड में पृथ्वी जैसे अनेक लोग विद्यमान हैं, उनमें मनुष्य जैसे ही नहीं, वरन उससे भी कहीं अधिक विकसित स्तर के जीवधारी मौजूद हैं।

जिस प्रकार पृथ्वीनिवासी चंद्रमा पर पहुँच चुके और सौर-मंडल के अन्यान्य ग्रहों की खोज में तत्पर हैं, उसी प्रकार उन बुद्धिमान प्राणियों का भी यह प्रयास है कि वे विकसित जीवधारियों का दुनिया से संपर्क स्थापित करें और परस्पर आदान-प्रदान के अनेक उपाय एवं मार्ग खोज निकालें।

पृथ्वी पर कई प्रकार के ऐसे संकेत समय-समय पर मिलते रहते हैं, जिनसे प्रतीत होता है कि अन्य लोकों के बुद्धिमान प्राणियों को पृथ्वी की सुविकसित स्थिति का भी ज्ञान है और वे मनुष्य जाति के साथ अपने संबंध स्थापित करने के लिए लालायित एवं प्रयत्नशील हैं। प्रकाशपुंजों के अवतरण के रूप में यह अनुभव पृथ्वीनिवासियों को होते भी रहते हैं। पाश्चात्य जगत में इन्हें उड़न तश्तरियाँ नाम दिया जाता है।

कैलीफोर्निया के कार्निंग शहर में बैठे हुए लोगों ने आकाश में एक चमकदार अनोखी चीज देखी, जो काफी नीचे उड़ रही थी और उसमें से चमकदार प्रकाश किरणें निकल रही थीं। वह एक विशाल

धातुनिर्मित सिगार जैसी थी, जो ३०० से ५०० फीट की ऊँचाई पर उड़ रही थी। इसके सिर में से चमकदार प्रकाश किरणें निकल रही थीं और पैंदे में से हलकी नीली रोशनी फूट रही थी। फिर उसकी चाल बढ़ी और तेजी से आकाश में विलीन हो गई। इन दर्शकों में से कितनों ने ही कहा—''उड़न तश्तरियों की बात वे गप समझते थे, पर आज उनने आँखों से देखकर यह विश्वास कर लिया कि वह वस्तुतः एक सचाई है।''

रूसी वैज्ञानिकों ने कुछ समय पूर्व यह घोषणा की थी कि उनने ब्रह्मांड के किन्हीं तारकों द्वारा भेजे गए संकेत सुने हैं। यह एक क्रमबद्ध टिमटिमाहट के साथ जुड़े हुए ज्योति-संकेतों के रूप में हैं। वे कहते हैं कि ऐसा कर सकना किसी प्रबुद्ध स्तर के प्राणधारियों के लिए ही संभव हो सकता है।

आरंभ में उनकी बात को ज्यादा महत्त्व नहीं मिला, पर अब उसे एक तथ्य माना गया है। एक 'क्वासर' तारा, जिसे खगोल विद्या की भाषा में 'सी० टी० ए०-१०२' कहा जाता है, निस्संदेह पृथ्वी पर ऐसी टिमटिमाहट और रेडियो धाराएँ भेज रहा है, जिसे कर सकना किन्हीं विचारवान प्राणियों के लिए ही संभव है।

ब्रिटेन के विज्ञानी लार्ड स्नो ने वैज्ञानिक सम्मेलन में आशा प्रकट की थी कि अंतरिक्ष से किसी प्रबुद्ध जाति के संदेश प्राप्त करने का सुअवसर मनुष्य को निकट भविष्य में ही मिलेगा। यह आशा अकारण ही नहीं थी। अंतरिक्ष संपर्क के लिए बढ़ते हुए मनुष्य के चरण क्रमशः इस आशा बिंदु की समीपता का ही आभास देते हैं।

एक फ्रांसीसी खगोलविद्याविशारद ने खोजकर बताया कि ये उड़न तश्तरियाँ इन्हीं दिनों आने लगी हों, ऐसी बात नहीं है, इनका आवागमन बहुत समय से चल रहा है। रोम में ईसा से २१२ वर्ष पूर्व उड़न तश्तरी देखी गई थी। शेक्सपियर के ग्रंथों में ही नहीं बाइबिल

में भी उनका उल्लेख है। अमेरिका में उड़न तश्तरी अनुसंधान कार्य १९४७ से ही चल रहा है, जबकि प्रथम बार वायुयान चालक केनिथ आर्नोल्ड ने माउंट रेनियर के निकट अपने विमान से उड़न तश्तरी देखी थी।

हिंदी के प्रख्यात लेखक श्री इलाचंद जोशी ने २३ जून १९६३ के 'धर्मयुग' में अपनी निज की एक अनुभूति छपाई थी। वे नैनीताल जिले के ताकुला गाँव के एक बँगले में ठहरे थे। रात्रि को उन्हें पास ही कहीं जाना था कि उस घोर अंधकार में उनने देखा कि "सहसा दक्षिण-पश्चिम की ओर का पहाड़ी क्षितिज तीव्र प्रकाश से उद्भाषित हो उठा। क्षण भर के लिए अभ्यासवश मैंने समझा कि बिजली कौंध उठी है, पर जब प्रकाश पूरे आठ सेकंड तक स्थिर रहा और बिजली की तरह एक ही सेकंड के बाद विलीन नहीं हुआ, तब मैं चौंका और उसके बाद ही मैंने आश्चर्य से देखा कि जलते हुए बड़े बल्ब की तरह की कोई चीज बिना तनिक भी शब्द किए क्षितिज को लाँघती हुई सीधे मेरे सिर के ऊपर से आकाश की ओर बड़ी तेजी से उड़ी जा रही है। उसकी पूँछ से तीव्रतम शुभ्र और श्वेत प्रकाश एक सर्च लाइट की तरह पीछे की ओर बिखर रहा था और उसका धड़ पूरे का पूरा एक बहुत बड़ी चिता की-सी पीली लपटों-सा दहक रहा था। कुछ क्षणों के लिए मुझे लगा कि कोई भटका हुआ विमान जल गया है और क्षण भर में कहीं गिरना ही चाहता है, पर वह बड़ी तेज रफ्तार से बिना तनिक भी शब्द किए मेरे सिर के ऊपर से होता हुआ सीधा आगे की ओर निकलकर कुछ ही क्षणों बाद आँखों से ओझल हो गया। तब मैं हक्का-बक्का रह गया।"

इस संबंध में वैज्ञानिकों की अटकलें तरह-तरह की हैं— 'साइंस' और 'दी न्यू साइंटिस्ट' पत्रों के स्तंभ लेखकों ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि ये उड़न तश्तरियाँ अन्य ग्रहों से आने

वाले संदेशवाहक हैं। वे पृथ्वी की खोज-खबर लेने आते हैं। अन्य देशों के मनुष्य से भी विकसित किस्म के प्राणी हो सकते हैं और वे भी इस बात के इच्छुक हो सकते हैं कि प्रगतिशील प्राणियों के साथ संपर्क बढ़ाकर ब्रह्मांड में जहाँ संभव हो प्रगतिशीलता का अधिक संवर्द्धन किया जाए।

रूसी खगोलवेत्ता आई० एस० श्कलोवस्सकी ने अपने ग्रंथ 'इंटेलिजेंट लाइफ इन द युनिवर्स' में विस्तारपूर्वक प्रतिपादित किया है कि 'पृथ्वी पर से सबसे पहली ऐसी शब्द-ध्वनि अब से बीस वर्ष पूर्व अंतरिक्ष में फेंकी गई थी, जो अन्य ग्रहों के प्रगतिशील प्राणियों द्वारा सुनी या समझी जा सके। यदि वह ध्वनि बिना कोई व्यवधान पड़े बढ़ती चली जा रही होगी, तो सौरमंडल से बाहर के सबसे निकटवर्ती तारे तक पहुँचने में अभी सफल नहीं हुई होगी। शब्द की गति ११ हजार मील प्रति घंटा है। पृथ्वी से निकटतम तारा 'प्राक्सिया सेंटरी' है। इसकी दूरी ४.३ प्रकाश वर्ष है। प्रकाश वर्ष का अर्थ है छह की संख्या के आगे १८ शून्य रख देने पर जो संख्या बनती है अर्थात छह पदम मील। इतनी दूर तक बीस वर्ष पूर्व फेंकी गई आवाज को पहुँचने में अभी मुद्दतों लगेंगे। वह आवाज सुनी जा सकी, तो वे लोग पृथ्वी की उपयोगिता समझेंगे और यहाँ तक पहुँचने का रास्ता निकालेंगे। उनकी यात्रा को भी बहुत समय लगेगा, तब कहीं उनका पृथ्वी से संबंध हो सकता है। इस धरती के निवासियों को कुछ कहने लायक वैज्ञानिक प्रगति में अभी मुश्किल से तीस वर्ष हुए हैं। इससे पहले तो भौतिक समृद्धि की दृष्टि से भी पृथ्वी के लिए बहुत पिछड़े हुए थे और विचार, आदर्श एवं व्यवस्था की दृष्टि से तो हजार के पीछे ९९९ व्यक्ति अभी भी फूहड़ जिंदगी ही जी रहे हैं। ऐसी दशा में अन्य ग्रहनिवासियों को यदि वे सचमुच प्रगतिशील होंगे, तो उन्हें कुछ भी आकर्षण न होगा, हम लोग गए-गुजरे ही दीखेंगे। ऐसी दशा में वे क्यों इतना श्रम करेंगे। फिर यह

कहना भी कठिन है कि सबसे निकटवर्ती तारे पर ही सभ्यता का विकास हो गया हो। यदि विकसित तारे और भी आगे हुए, तो उनका आवागमन और भी अधिक समयसाध्य होगा। ऐसी दशा में यदि यह मान भी लिया जाए कि किन्हीं तारों पर प्रगतिशीलता है, तो उसके साथ संपर्क बनना इतना सरल नहीं है। सौरमंडल के ग्रहों और उपग्रहों की इतनी खोज तो पहले हो चुकी है कि उनमें से किसी पर भी विकसित प्राणधारी के होने की संभावना नहीं है। जीवन का आरंभिक चिह्न भले ही उनमें से किसी पर मिल जाए। अस्तु, उड़न तश्तरियों की संगति अन्य लोकवासी प्राणियों के साथ नहीं मिलाई जानी चाहिए।''

इन घटनाओं से समय-समय पर पृथ्वी के विभिन्न क्षेत्रों में देखी जाने वाली उड़न तश्तरियों से यह तो सिद्ध हो ही जाता है कि पृथ्वी पर ही उन्नत सभ्यता नहीं है, वरन अन्य ग्रहों में और भी उन्नत सभ्यताएँ हैं। जीवन के इस विस्तार में जिसके कभी-कहीं से कोई संकेत मिलते रहते हैं, मनुष्य का महत्त्व पहाड़ की तुलना में राई के बराबर है।

मनुष्य से भी महान कहीं कुछ है

इस विशाल ब्रह्मांड में अकेली पृथ्वी पर ही जीवधारी नहीं रहते, वरन अन्यत्र ग्रह-नक्षत्रों पर भी जीवन विद्यमान है, अब यह संभावना स्पष्टत: स्वीकार कर ली गई है। परिस्थितियों के अनुरूप जीवधारियों की आकृति और प्रकृति में अंतर हो सकता है, पर उसका अस्तित्व अन्यत्र भी है अवश्य। इस दिशा में खगोलवेत्ताओं की उपलब्धियाँ क्रमश: यही सिद्ध करती जा रही हैं कि अपने सौरमंडल में भी जीवन का अस्तित्व मौजूद है और इसके बाहर के तारकों में बुद्धिमान जीवधारियों की सत्ता विद्यमान है।

फेनेमारिया (कैलीफोर्निया) विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डा० मेथ्यू नार्टन का कथन है कि मानवी प्रयत्नों से शुक्र ग्रह में कुछ स्थानों पर वनस्पतियाँ उगाई जा सकती हैं और अन्य रेडियो प्रयत्नों द्वारा वहाँ संव्याप्त कार्बन डाइआक्साइड के मूलतत्त्व कार्बन को अलग किया जा सकता है। शुक्र ग्रह संबंधी अपने शोध-निबंध में नार्टन महोदय ने इन गैसों के विच्छेदीकरण और वनस्पति उत्पादन की प्रक्रिया को 'फोटो सैंथेसिस' की एक विशिष्ट प्रणाली के रूप में प्रस्तुत किया है और कहा है कि इस आधार पर शुक्र में जल वर्षा आरंभ हो सकती है तथा वहाँ का वातावरण कुछ दिन में ऐसा ही हो सकता है, जैसा कि जीवधारियों के रहने योग्य अपनी पृथ्वी का है।

पुल्कोवो रेडियो टैलिस्कोप द्वारा प्राप्त सूचनाएँ ऐसी नहीं हैं कि शुक्र ग्रह पर जीवन के अस्तित्व से सर्वथा इनकार किया जा सके और न डा० री का वह कथन अभी तक पूरी तरह रद्द किया गया है, जिसमें उन्होंने शुक्र में प्राणधारियों की बड़ी संख्या में होना संभावित बताया था।

मंगल ग्रह में कई हजार मील दूर रहकर अंतरिक्ष यानों ने जो ८० हजार फोटो भेजे हैं, उन्हें देखने पर यह निश्चित नहीं किया जा सका कि उनमें जीवन विद्यमान है। ग्रीनवैक (वर्जीनिया) के पर्यवेक्षकों ने भी उपलब्ध रेडियो संदेशों के आधार पर अभी यह निष्कर्ष नहीं निकाला है कि उनकी पहुँच के क्षेत्र में पृथ्वी के अतिरिक्त अन्यत्र भी जीवन है।

वर्जीनिया के ग्रीनवैक नामक स्थान पर अवस्थित रेडियो वेधशाला के खगोलशास्त्री फ्रैंकड्रेक ने एक तारे से आने वाले रेडियो-संकेतों का अध्ययन किया था। जहाँ से यह संकेत आते थे। उस तारे का नाम उन्होंने 'ओज्मा' रखा था और इसी नामकरण के आधार पर उनकी अनुसंधानशाला को ओज्मा प्रोजेक्ट कहा जाता तथा संकेत सुने थे। यद्यपि उस समय किसी निष्कर्ष पर न पहुँचा जा सका, फिर भी ड्रेक महोदय ने यह भविष्यवाणी की थी कि अब न सही फिर कभी सही हम अंतर्गृही प्राणियों के साथ आदान-प्रदान में सफलता प्राप्त करके रहेंगे।

जहाँ-तहाँ पाए गए उल्का पिंडों में जीवनतत्त्व पाए गए हैं, इससे अनुमान होता है कि अन्यत्र भी जीवन होना चाहिए। अपने लोक में कभी-कभी ऐसे वाइरस (विषांड) आ धमकते हैं, जिनकी ताप सहन शक्ति इतनी अधिक होती है, जितनी पृथ्वी पर संभव नहीं। इन आधारों को देखते हुए इस मान्यता की पुष्टि होती है कि अन्यत्र भी जीवन होना ही चाहिए।

जो सूचनाएँ अन्य ग्रहों से हमारे उपकरणों ने प्रस्तुत की हैं, उनके आधार पर मोटा निष्कर्ष यह निकाला गया है कि अपने सौरमंडल में पृथ्वी के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं भी जीवन की संभावना नहीं है, पर यह निष्कर्ष सही ही हो, इसकी कोई गारंटी नहीं। मौसम की खोज-खबर लेने वाले उपग्रह अकसर आकाश में उड़ते रहते हैं। उन्होंने पृथ्वी के जो चित्र भेजे हैं, उनके आधार पर कई वैज्ञानिकों ने

ठीक वैसे ही निष्कर्ष निकाले हैं और अंतरिक्षवेत्ताओं को चुनौती दी है कि इन चित्रों का वैसा ही निष्कर्ष उन्हीं आधारों पर निकालें, जैसा कि अन्य ग्रहों के संबंध में निकाला गया है। इससे यही सिद्ध होगा कि पृथ्वी पर कोई जीवन नहीं है। वहाँ जीवित प्राणियों के रहने की कोई संभावना नहीं है। यह चुनौती प्रस्तुत करने वालों में कार्नेल विश्वविद्यालय के खगोलवेत्ता प्रो० कार्ल सागन अग्रणी थे, वे चुनौती देते हैं कि इन उपग्रह प्रेषित चित्रों के आधार पर कोई यह साबित करे कि धरती पर भी जीवन हो सकता है। जिस तरह जीवन रहते हुए भी धरती के प्रस्तुत उपकरणों ने यहाँ निर्जीवता दर्शाई है, उसी तरह उनकी खोज-खबर को इतना प्रामाणिक नहीं माना जा सकता कि और मंडल में अन्यत्र कहीं जीवन की संभावना का स्पष्टत: खंडन किया जा सके।

मंगल पर जो परिस्थितियाँ हैं, उनमें धरती से भेजे हुए जीव भी जी सकते हैं। इस तथ्य का प्रतिपादन कैलीफोर्निया की एक्स रिसर्च लेबोरेटरी के डा० सीरल पोन्नमपेरूया तथा डा० हैरल्ड क्लीन ने किया है। उन्होंने 'रिव्यू ऑफ बायोलौजी' के अक्टूबर १९७० के अंक में एक तर्कपूर्ण लेख छपाया है, जिसमें यह सिद्ध किया है कि पृथ्वी पर उन जटिल परिस्थितियों में जीवनयापन करने वाले प्राणी मौजूद हैं; जैसे कि मंगल ग्रह पर हैं। पृथ्वी पर १४° से लेकर २००° तक तापमान में जीवित रहने वाले प्राणी मौजूद हैं, जबकि मंगल ग्रह पर वह न्यूनतम ८५° और अधिकतम ११२° ही आँका गया है। मंगल पर अल्ट्रा वायलेट रेडिएशन, वायुमंडलीय घनत्व तथा अस्तित्व से इनकार किया गया है, पर इन तीनों ही परिस्थितियों में जीवन के फलने-फूलने की पूरी-पूरी गुंजाइश है। इस प्रतिपादन के पक्ष में सबसे मजबूत दलील यह है कि पृथ्वी पर अब से ४.६ अरब वर्ष पहले जीवन आरंभ हुआ, उस समय तक यह अग्नि-पिंड थोड़ा ही ठंढा हो पाया था। उस समय सिर्फ अमोनिया, मीथेन,

हाइड्रोजन और भाप के सघन बादल ही आकाश में छाए हुए थे। सूर्य पराबैंगनी किरणों की वर्षा से और ज्वालामुखी विस्फोटों की गरमी से सर्वत्र बिखरे अणु टूट-टूटकर विभिन्न रूपों में परिणत हुए। उन्हीं से अमीनो अम्ल एवं कार्बनिक पदार्थ बने, जिनसे जीवन का प्रादुर्भाव संभव हो सका। इन्हीं तत्त्वों का संयोजन डी० एन० ए० के रूप में सामने आया। प्रोटीन की रचना हुई और जीवित कोशिकाओं की हलचल उत्पन्न हुई। उसी का क्रमिक विकास विभिन्न जीव-जंतुओं के रूप में सामने आया। यह पृथ्वी पर जीवन उद्‌भव का इतिहास अन्य ग्रहों पर भी दोहराया जा सकता है। शिकागो विश्वविद्यालय के जीवविज्ञानी स्टेनले विलर फ्लोरिडा विश्वविद्यालय के सिडनी फोक्स, ह्यूस्टन विश्वविद्यालय के जुआन जोरों इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि अन्य ग्रहों में इन दिनों जो परिस्थितियाँ हैं, उनमें भी जीवन विकास की संभावना है, भले ही पृथ्वीनिवासियों से भिन्न प्रकार का ही क्यों न हो?

संसार के विभिन्न भागों में अंतरिक्ष से टूटे हुए उल्कापिंडों के जो अवशेष पाए गए हैं, उनमें कार्बोनेशियस काड्राइट जैसे अमीनो अम्ल मिले हैं साथ ही प्राणियों के फासिलपिंजर भी उनमें देखे गए हैं। सन् १९७० में आस्ट्रेलिया में गिरी उल्का से १७ प्रकार की अमीनो अम्ल पाए गए थे। मैसाचुसेट्सय इंस्टीट्यूट ऑफ टैक्नोलॉजी के एक प्रतिवेदन में शनि के तथा वृहस्पति के उपग्रहों में जीवन होने की संभावना की गई है।

अब धरती के विज्ञानी भी मानने लगे हैं कि अन्य परिस्थितियों में भी जीवन का विकास एवं परिपोषण हो सकता है। पृथ्वी पर कार्बन, ऑक्सीजन, कार्बन डाइआक्साइड और पानी की उपस्थिति में ही जीवन पलता है सो ठीक है, पर अब यह भी स्वीकार कर लिया गया है कि 'सिल्किन' भी कुछ अन्य यौगिकों के साथ मिलकर जीवन का आधार हो सकता है। पानी की जगह द्रव अमोनिया, द्रव

मीथेन हाइड्रोजन सल्फाइड भी काम दे सकता है। ऑक्सीजन की जरूरत गंधक भी पूरी कर सकता है।

हम कई ग्रहों के बारे में यह जानते हैं कि वहाँ बहुत ठंढक अथवा गरमी होनी चाहिए, पर यह अनुभव सही नहीं है। पृथ्वी के इर्द-गिर्द हवा और धूप की मजबूत छतरी तनी हुई है, वह पृथ्वी पर आने वाली सूर्य किरणों को रोककर उपयुक्त गरमी बनाए हुए है। इस छतरी की एक परत में अतिशीत की और एक परत में अति ताप की स्थिति है। यदि अन्य किसी ग्रह के निवासी पृथ्वी का पता लगा रहे हों और उनके हाथ इन दो परतों में से जो भी लगेगी, उसी के आधार पर यह मान बैठेंगे कि इस लोक का तापमान इसी स्तर का है, जबकि वस्तुस्थिति इससे सर्वथा भिन्न प्रकार की होगी। धरती पर तापमान जीवन के उपयुक्त सह्य है। ठीक इसी प्रकार अन्य ग्रहों में वहाँ के निवासियों के लिए उपयुक्त तापमान किसी गैसीय छतरी में ढका-छिपा हो सकता है। वहाँ की स्थिति के बारे में हमें बहुत ही कम जानकारी है। ऐसी दशा में किसी उचित निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन है। इन परिस्थितियों में हम यह कल्पना कर बैठें कि अन्य ग्रहों में जीवन नहीं होगा, सर्वथा अनुचित है। सौरमंडल भर की हमें थोड़ी जानकारी है। यदि इस छोटे क्षेत्र में जीवन नहीं भी हो, तो भी यह नहीं कहा जा सकता कि पृथ्वी ही एकमात्र सजीव है और अन्यत्र सर्वत्र निर्जीवता और निस्तब्धता का साम्राज्य है।

जीवन कहीं भी, किसी भी रूप में क्यों न प्राप्त हो उसके मूल में डी० एन० ए० से यौगिकों के रूप में पाए जाने वाले रासायनिक पदार्थ ही हैं। इन रसायनों का अस्तित्व अन्य लोकों में भी है, इस संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता।

प्रख्यात रूसी खगोलवेत्ता निकालाई कार्दाशेव ने अंतरिक्ष से अवतरित होने वाली विभिन्न रेडियो ध्वनि-तरंगों को वर्णछटा में

परिवर्तित करके ऐसे चार्ट तैयार किए थे, जिनसे यह प्रकट होता था कि प्रकृतिगत परिवर्तनों से रेडियो कंपनों की क्या स्थिति होती है और अंतर्ग्रही रेडियो संकेतों की उनसे क्या भिन्नता है ?

इस अन्वेषण को आगे जारी रखते हुए सोवियत संघ के एक दूसरे ज्योतिर्विद गेन्नादी शोलोमित्स्को ने पता लगाया कि सौ दिन के अंतर से एक जैसे अंतर्गृही रेडियो-संकेत नियमित रूप से, नियमित क्रम से आते हैं। इस नियमितता के पीछे किन्हीं प्रबुद्ध प्राणियों का प्रयास ही होना चाहिए।

खगोलज्ञ मानते हैं कि हमारी आकाश गंगा में एक करोड़ के लगभग ग्रह ऐसे हैं, जो अपने-अपने सूर्यों की परिक्रमा करते हुए ऐसे क्षेत्र में रहते हैं, जहाँ न अधिक सरदी है और न गरमी। वहाँ हमारी धरती की तरह ही मध्यवर्ती शीत-ताप की ही नहीं, अन्य परिस्थितियाँ भी ऐसी हैं, जिन पर जीवन अपने आप पनप सकता है। जीवविज्ञानी पहले यह मानते थे कि जीवन का आधार कठिन है, पर अब यह माना जाने लगा है कि सिलिकन में भी कार्बन जैसी ही जीवन को उत्पन्न कर सकने वाली क्षमता मौजूद है। सिलिकन प्रचुर मात्रा में अन्य ग्रहों पर मौजूद है, तो वहाँ जीवन भी होना ही चाहिए।

कैंब्रिज विश्वविद्यालय के प्रो० मार्टिन रायल ने २५ ऐसे रेडियो-तारकों की सूची तैयार की है, जो अपने सूर्य की अपेक्षा सैकड़ों गुने बड़े और तेजस्वी हैं। उनकी ऊर्जा कल्पनातीत है। प्रो० फ्रड हायल के अनुसार उन रेडियोतारकों के अनेक ग्रह-उपग्रह जुड़े हैं। उनमें अनेकों की स्थिति जीवन के लिए अनुकूल उपयुक्त होने की पूरी-पूरी संभावना मानी जा सकती है। ऐसी ही उपलब्धियों से प्रभावित होकर ब्रिटेन के अंतरिक्षविज्ञानी लार्ड स्नो ने आशा व्यक्त करते हुए कहा था कि वह दिन हम सबके लिए बेहद खुशी का होगा, जब ब्रह्मांड के अन्य प्राणियों के साथ हमारा संपर्क बनेगा।

कहीं तो है ही जीवन

अपनी पृथ्वी जैसी स्थिति के ग्रह इस समस्त ब्रह्मांड में १००,००० अरब माने जाते हैं। इनमें से एक हजार पीछे एक ऐसा जरूर होगा, जिनमें जीवन विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ मौजूद हों। उनमें से भी एक हजार पीछे एक ग्रह जरूर ऐसा होगा, जिसमें मनुष्य जैसे समुन्नत प्राणियों का अस्तित्व हो। यदि यह कल्पना सही है, तो कहा जा सकता है कि ब्रह्मांड में १० करोड़ ग्रह ऐसे होने चाहिए, जिनमें बुद्धिमान प्राणी निवास करते हों। पृथ्वी पर जिस प्रकार के अणु-परमाणु पाए जाते हैं, उन्हीं से मिलते-जुलते अन्य ग्रहों में भी हैं। शीत-ताप जहाँ भी मध्यवर्ती होगा, वहाँ निश्चय ही प्राणियों की उत्पत्ति होने लगेगी और क्रमशः अधिकाधिक विकसित होते चले जाएँगे।

आर्थर क्लार्क की 'टू थाउजेंड वन ए स्पेस ऑडिसी', एच० जी० वेल्स की 'दी वार ऑफ दी वर्ल्डस', क्लिफर्ड सिमैक की 'इमिग्रैंट', फ्रेड होयल की 'फिपरप्लैनेट', एडगर राइसवरी की 'ग्रीन मैन फ्राम मार्स' जैसी पुस्तकों में प्रस्तुत प्रतिपादन से यह सहज ही विश्वास होता है अनंत ब्रह्मांड में अनेकों में समुन्नत जीवन का अस्तित्व अवश्य होगा। जियूलवर्ग, एडगर एलन, जेम्स ओबिएन्स, कार्ल गन नाइगेक आसियोव आदि विद्वानों ने कल्पना और तर्कों के आधार पर ही अंतर्गृही जीवन के संदर्भ में अनुमान लगाया है। इन मनीषियों ने कोई ठोस प्रमाण प्रस्तुत नहीं किए हैं, तो भी जो संभावनाएँ और तथ्य प्रस्तुत किए गए हैं, वे उपेक्षणीय नहीं हैं।

डा० फ्रेड होयल ने एक पुस्तक लिखी है 'ऑफ मैन एंड गैलेक्सीज' उसमें उन्होंने बताया है कि अपनी आकाश गंगा में अंतर्गृही संदेशों के आदान-प्रदान की कोई एक लाख रेडियो संचार धाराएँ बहती हैं, जिनसे कुछ महत्त्वपूर्ण ग्रह परस्पर कई तरह के

आदान-प्रदान करते हैं। इस संचार-व्यवस्था में धरतीनिवासी भी एक दिन भागीदार होकर रहेंगे।

अब तक के संदेश जो उपग्रहों ने भेजे हैं, उनसे एक बात निश्चित हो गई है कि सभी ग्रह प्रकारांतर से पाँच महाभूतों (आकाश, पृथ्वी, जल, वायु और अग्नि) से बने हुए हैं। इनकी न्यूनाधिक मात्रा के अनुसार वहाँ वनस्पति भी होगी। बादल तो हैं ही, तापमान और वायुभार भी है, पर इनका अपनी पृथ्वी के तापमान और वायुभार से सांमजस्य नहीं है। इसलिए यह तो नहीं कहा जा सकता कि वहाँ के प्राणधारियों की मानसिक और शारीरिक स्थिति कैसी है, किंतु जीवन के अस्तित्व के बारे में बिलकुल इनकार नहीं किया जा सकता।

हारवर्ड वेधशाला (न्यूयार्क) के अवकाश प्राप्त ज्योतिषी डा० हारलो शेपले के अनुसार तो १० करोड़ से भी अधिक ग्रहों में घास, वृक्ष और जीव रहते हैं। यह विचार उन्होंने एक टेलीविजन कार्यक्रम में व्यक्त किया। तीन अन्य अमेरिकी वैज्ञानिकों ने भी इस विश्वास की पुष्टि की कि केवल पृथ्वी पर ही जीव नहीं रहते, अन्य लोकों में भी जीवन का अस्तित्व विद्यमान है।

७३ वर्षीय रूसी वैज्ञानिक श्री ए० आई० ओपारिन की राय—ग्रहों पर जीवन है। अकादमीशियन, ओपारिन ५० वर्ष से जीवन के उद्‌भव पर अनुसंधान कर रहे हैं, उन्होंने एक प्रश्न के उत्तर में बताया कि अन्य ग्रहों पर किसी तरह का जीवन होना चाहिए, किंतु यह जरूरी नहीं कि वे मानव जैसे प्राणी हों। ज्यों-ज्यों मनुष्य की प्रगति करेगा, उसे अन्य ग्रहों के प्राणियों के बारे में जानकारी, रासायनिक व खनिज विज्ञान की विधियों के प्रयोग और उल्का-पिंडों के द्वारा मिलती रहेगी। श्री ओपारिन जो सोवियत विज्ञान अकादमी की जीव विज्ञान इंस्टीट्यूट के डाइरेक्टर और जीव-शास्त्रियों की अंतरराष्ट्रीय सोसाइटी के उपाध्यक्ष भी हैं, का कहना

है कि कार्बन यौगिकों की विकास की प्रक्रिया ही पृथ्वी पर जीवन का आधार है, तो अन्य ग्रहों पर जहाँ भी कार्बन यौगिक हैं, जीवन का होना बिलकुल निश्चित है—(१) आदिकालीन आर्गनिक पदार्थ हाइड्रो कार्बन, (२) विभिन्न प्रकार के जटिल आर्गनिक पदार्थों के जलीय घोल में प्राइमरी सूप का निर्माण और (३) जटिल बहु आणविक खुली प्रणाली। ये तीन प्रक्रियाएँ ही प्राणियों के उद्‌भव के स्रोत हैं और यह विकासक्रम अंतरिक्ष में व्यापक रूप से विद्यमान है।

अब यदि अंतरिक्ष में जीवन है, तो उनमें बौद्धिक विकास और शब्द-ध्वनि की स्थिति भी होनी चाहिए। अंतरिक्ष वैज्ञानिक काफी समय से यह कहते आ रहे हैं किंतु हमारी ग्रहणशीलता भिन्न प्रकार की होने से हम उन्हें समझ नहीं पा रहे। पर यह निश्चित है कि किसी ग्रह में अत्यंत बुद्धिमान प्राणियों का निवास है अवश्य। प्रसिद्ध वैज्ञानिक कार्दाशेव ने उन विशेषताओं पर प्रकाश डाला है, जिनके द्वारा अंतरिक्ष से स्थायी तौर पर आने वाली ध्वनियों में से उन ध्वनियों को पहचाना जा सकता है, जो किसी कृत्रिम स्रोत से आ रही हैं। उन्होंने विभिन्न स्रोतों से आने वाली ध्वनि-तरंगों के वर्ण छटाओं के अलग-अलग चार्ट तैयार किए हैं। एक चार्ट में उन्होंने दिखाया है कि पृथ्वी से हजारों-लाखों प्रकाश वर्षों की दूरी पर स्थित सभ्यताओं के रेडियो-संकेतों की वर्ण छटा (रेडियो फोटो) किस प्रकार होगी? यह वर्ण छटा प्राकृतिक स्रोतों से निकलने वाली वर्ण छटा से बिलकुल भिन्न होगी।

पृथ्वी और अन्य लोकों को मिलाने वाली कुछ अदृश्य शक्तियों की सूक्ष्म धाराएँ हैं, जो जीव को ऊर्ध्व या अधोगामी तक पहुँचाने में समर्थ हैं। वरुण, इंद्र, अग्नि आदि तत्त्वों की विशिष्टता और बहुलता वाली ये शक्तिधाराएँ पृथ्वी के समीप भी हो सकती हैं और किसी ऐसे स्थान पर भी जहाँ पृथ्वी निर्धारित समय पर घूमते-घूमते पहुँचती

हो और उन शक्तिधाराओं के समीप हो जाती हों, पर एक बात यह निश्चित है कि वह शक्तिधाराएँ भू-गुरुत्वाकर्षण (ग्रेवीटेशन) नहीं हो सकतीं, क्योंकि यदि ऐसा होता, तो जिन घटनाओं द्वारा उक्त शक्तिपथों की निश्चितता अगली पंक्तियों में प्रमाणित कर रहे हैं, वैसी घटनाएँ कहीं भी किसी स्थान में हो सकती थीं।

विज्ञान यह मानने लगा है कि आकाश में कुछ विशिष्ट प्रकार के नक्षत्र ऐसे हैं, जो कुछ एक ही प्रकार की किरणें या ऊर्जा प्रवाहित करते हैं और उनकी शक्ति एवं प्रचंडता इतनी तीव्र होती है कि वे सृष्टि के किसी भी स्थान में व्यापक हलचल उत्पन्न करती रहती हैं। १९६२ के राकेट अभ्यास के समय यह पाया गया कि सूर्य से बहुत दूर हमारी आकाश गंगा में ही एक ऐसा तारा है, जो वर्तमान और एक्स विकिरण की अपेक्षा दस लाख गुनी तीव्र रफ्तार से एक्स-विकिरण कर रहा है। यह तारा पृथ्वी से १००० प्रकाश वर्ष दूर है और इसका नाम 'स्को एक्सवन' रखा गया है।

तात्पर्य यह है कि अब तक की यह मान्यता कि पृथ्वी के जलवायु में केवल सूर्य का ही हस्तक्षेप है, गलत है। एक्स-विकिरण के ही तीस तारे छह वर्षों में ढूँढ़े गए हैं, अभी अन्य महत्त्वपूर्ण किरणों के तारे जो अपना विशिष्ट प्रभाव रखते हैं, अनंत आकाश में हैं और उनकी जानकारी वैज्ञानिकों को नहीं है, पर कुछ ऐसी घटनाएँ अवश्य सामने आई हैं, जिनसे भारतीय दर्शन की उक्त मान्यता सत्य सिद्ध होती है कि आकाश में सूक्ष्म प्रवाह है अवश्य, जो लौकिक जीवन में ही नहीं पारलौकिक जीवन को भी प्रभावित करते हैं।

अन्य लोकों के वासी

५ दिसंबर १९४५ को ५ टी० वी० एम० बम वर्षक हवाई जहाज हवाई अड्डे से प्रशिक्षण उड़ान पर रवाना हुए। उन्हें पहले पूर्व की ओर जाना था, फिर उत्तर की ओर, अंत में दक्षिण-पूर्व

होकर लौटना था। सब वायुयान पेट्रोल, ईंधन, दिशा निर्देशक यंत्रों और संचार साधनों से पूरी तरह सुसज्जित थे। उड़ाकों में कोई नया नहीं था, सब पुराने योग्य और अनुभवी उड़ाके थे। किसी प्रकार की घटना की रत्ती भर भी संभावना नहीं थी।

कंट्रोल टावर के निर्देश पर पहला जहाज, जिसे स्क्वाड्रन लीडर चला रहे थे—उड़ा, उसके ५ मिनट के अंतर से शेष चार आकाश में गड़गड़ाने लगे। प्रथम वायुयान में दो व्यक्ति, शेष चारों में तीन-तीन व्यक्ति थे। सब जहाज मजे में उड़ते गए। रेडियो संदेश मिला—हम २०० मील प्रति घंटा की रफ्तार से ठीक तरह उड़ रहे हैं। अब हम अटलांटिक महासागर के पूर्वी किनारे की ओर बढ़ रहे हैं।

दोपहर ढल चुकी थी। तीन बजकर पैंतालीस मिनट हुए थे कि एकाएक खतरे का संकेत मिला। जहाजों को उतरने का संदेश देने की तैयारी की जाने लगी, पर तभी स्क्वाड्रन लीडर की आवाज सुनाई दी—हम लोग एकाएक कहाँ आ गए, कुछ पता नहीं चल रहा, यंत्र ठीक हैं, पर जब नीचे की ओर देखते हैं, तो न समुद्र है और न कहीं जमीन। पूछा गया-नकशा देखकर अपना ग्रिड रिफरेंस (स्थान का पता) दो, तो उत्तर मिला—यहाँ भौगोलिक स्थिति के बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता।

ये आखिरी शब्द थे। इसके बाद जहाज कहाँ गए, आज तक किसी को पता नहीं चल पाया। चलते-चलते अनुमानित संदेश मिला था, उत्तर-पूर्वी किनारे से कोई २२५ मील दूर....। उसी के आधार पर १३ कर्मचारियों और अच्छे-से-अच्छे यंत्रों से सुसज्जित मार्टिन हवाई जहाज को खोज के लिए भेजा गया। ५ मिनट तक उसने अपने उड़ने की खबर दी, पर उसके बाद ही उधर से भी कोई आवाज आना बंद हो गई। रात भर समुद्र के रक्षक जहाजों ने उधर निगाह रखी। प्रातःकाल होते ही २१ जहाज समुद्र में दौड़ाए गए।

३०० जहाज आकाश का चप्पा-चप्पा छानने लगे। १२ खोजी दल जमीन में खोज करते रहे। दिन भर खोज चलती रही, पर न तो समुद्र तल पर एक बूँद तेल का निशान मिला और न जमीन पर जहाज का एक इंच टुकड़ा। न किसी के शव मिले और न कोई पुरजे। मार्टिन जहाज तो समुद्र तल पर भी आराम से उतर सकता था। उसका संदेशप्रसारक यंत्र इतना जबरदस्त था कि उससे दूसरे देशों को भी संदेश भेजे जा सकते थे, पर उसका भी कहीं कोई सुराग न मिला।

नौसैनिक अधिकारियों ने बहुत खोज की, पर वे किसी कारण का पता न लगा सके। उन्होंने रिपोर्ट प्रकाशित करते हुए कहा—"यह सब क्या हुआ, हम इसकी कल्पना भी नहीं कर सकते।" इस स्थान का नाम 'प्वाइंट ऑफ नो रिटर्न' रखा गया। वहाँ जो भी गया, आज तक नहीं लौट पाया।

हमने विज्ञान में इतनी उन्नति की है कि चंद्र और मंगल ग्रहों तक पहुँच रहे हैं। हमारा भूगोल इतना समृद्ध हो चुका है कि ध्रुवों तक के बारे में अच्छी तरह जानने लगे हैं। ऐसी योजना बनाई जा रही है कि समुद्र के भीतर घुसकर धरती को छेद दिया जाए, ताकि उत्तर और दक्षिण की दूरी न्यूनतम रह जाए, पर उन पारलौकिक तथ्यों का पता लगाने में हमारी बुद्धि बिलकुल काम नहीं करती, जो इस तरह की अविज्ञात घटनाएँ घटित किया करते हैं।

हमारी पृथ्वी संसार के शून्य महाचक्र में कहाँ घूम रही है, कहाँ से कैसा विकिरण किस समय हो रहा है, यह रहस्य सुलझने को नहीं आ रहे हैं। बड़े-बड़े भौतिक उपकरण और मानवीय बुद्धि-कौशल भी इस तरह के अज्ञात कारणों का पता लगाने में असफल हैं। घटनाएँ ज्यों-की-त्यों होती रहती हैं।

इस घटना के ठीक तीन वर्ष बाद ही २८ जनवरी १९४८ को एक चार इंजनों वाला ब्रिटिश जहाज 'स्टार टाइगर' किंग्स्टन जा रहा था। उसका संबंध बारंपुड़ा हवाई अड्डे से था। हवाई जहाज

में कर्मचारियों सहित २६ यात्री सवार थे। जहाज से खबर मिली कि मौसम साफ है, हम ठीक तरह से उड़ रहे हैं, इसके बाद जैसे ही वायुयान उस प्वाइंट के स्पर्श में आया, न जाने कहाँ लुप्त हो गया। समुद्र में कोई निशान नहीं, धरती का कहीं मुख चौड़ा न हुआ। क्या उसे फिर आकाश निगल गया, इसका आज तक कुछ पता नहीं चल पाया।

'स्टार टाइगर' की तरह एक दिन 'एरियल' ने उड़ान भरी। कैप्टन जे० सी० मैक्फी चालक थे, उन्हें बारंपुड़ा से जमैका जाना था। फोर्टलैंडरले (फ्लोरिडा) के निकट वह स्थान आता है, जहाँ की उड़ान काफी विचित्र होती है। वहाँ एक छोटा तिकोना चक्कर काटकर बढ़ना होता है। एरियल की तेल टंकियों में १० घंटे तक उड़ने के लिए पर्याप्त तेल था, हवाई अड्डा छोड़ने के पौन घंटा बाद कैप्टन मैक्फी ने खबर दी कि जमैका ठीक समय पर पहुँच रहे हैं, इसके बाद न कोई आवाज ही आई और न यही पता चला कि एरियल कहाँ स्वाहा हो गया?

ये तीनों घटनाएँ एक-से-एक भयंकर घटित हुईं, पर आज तक इस बारे में सही तथ्यों का पता नहीं लगाया जा सका। न वहाँ से कोई संकेत मिले और न ही उस रहस्य का पता लगाया जा सका कि उस स्थान पर पहुँचकर वायुयानों का क्या हो जाता है? वैज्ञानिकों का अनुमान है कि संभवतः उस स्थान पर किसी ग्रह का इतना तेज विकिरण होता हो कि जहाज जलकर गैस बन जाते हैं। उस स्थान पर यदि मनुष्य सकुशल रह सके, तो अनुमान है कि पृथ्वी और आकाश के अनेक रहस्यों का पता चले।

पृथ्वी के अक्ष के संबंध में नई जानकारियाँ मिल सकती हैं, क्योंकि उस बिंदु पर पहुँचते ही जमीन दिखाई देना बंद हो जाती है, एक अनंत गहराई रह जाती है। यह भी संभावना है कि वहाँ किसी ग्रह का अति प्रखर गुरुत्वाकर्षण हो, जो वायुयानों को अपनी ओर

खींच लेता हो। ऐसा भी संभव है कि किसी ग्रह से वहाँ विद्युत धाराएँ प्रवाहित होती हों, जो जहाजों को चुंबक बनाकर किसी शक्तिशाली ग्रह या क्षुद्रग्रह की ओर ढकेल देती हों।

अनुमानों में कहाँ, कितनी सत्यता है, कहा नहीं जा सकता। पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि मानवीय विधान की अपेक्षा ईश्वरीय विधान अधिक शक्तिशाली है। वहाँ न मनुष्य की भौतिक सामग्री साथ देती है, न बुद्धि-कौशल तकनीक काम देती है और न साइंस। उसे जानने के लिए तो अपने जीवन के दृष्टिकोण को ही बदलना पड़ता है। अपनी तुच्छता स्वीकार करनी पड़ती है और महाकाल की महाशक्तियों पर विश्वास करना पड़ता है, जब इस तरह की ज्ञान-बुद्धि जाग्रत होती है, तो मनुष्य (जीवात्मा) के कल्याण का मार्ग भी निकलने लगता है।

अन्य ग्रहों पर उन्नत सभ्यताएँ भी

ब्राजील के दो टेलीविजन इंजीनियर मिगेल वायना जिसकी आयु कोई ३५ वर्ष होगी, मैनुअल क्रूज जो ३२ वर्ष का था—दोनों की अंतरिक्ष के रहस्य जानने की उत्कट अभिलाषा रहती थी। दोनों ने मिलकर एक प्रयोगशाला बनाई थी और उसमें विभिन्न प्रकार के प्रयोग किया करते थे। कुछ लोगों का कहना है कि उन्होंने अंतरिक्ष-वासियों को संदेश प्रेषित करने के कुछ सूत्र ढूँढ़ लिए थे। वे कितने सत्य थे, इस संबंध में कुछ कहा नहीं जा सकता।

अगस्त १९६६ की बात है। उक्त दोनों वैज्ञानिक कैंपोस से रियो-डि-जानेरियो के लिए निकले। इसी वर्ष साओपोलो से कोई १०० मील उत्तर-पश्चिम की ओर आकाश में कोई गोलाकार वस्तु तेजी से चक्कर काट रही थी। बाद में उससे कोई द्रव्य निकला, जिससे कंपिनास कसबे की सारी सड़कें गीली हो गईं। वैज्ञानिकों ने उक्त द्रव्य का विश्लेषण किया, तो पाया कि वह पिघला हुआ शुद्ध द्रव था। अनुमान है कि वह गोलाकार वस्तु कोई उड़न तश्तरी थी, जो किसी अन्य ग्रह से आई थी। उसमें बैठी हुई आत्माओं ने या तो प्रयोग के लिए या फिर संकेत देने की दृष्टि से ही वह द्रव पृथ्वी में डाला होगा।

दोनों इंजीनियर घर से ९ बजकर ३० मिनट पर निकले। क्रूज की धर्मपत्नी नेली ने एक हजार पाउंड के नोट एक कागज में बाँधकर क्रूज को दिए जिससे वह आवश्यक वस्तुएँ खरीद सकें। उन्हें टेलीविजन के कुछ पुरजे और कार खरीदनी थी। दोपहर के बाद दोनों नितराय शहर पहुँचे। वहाँ उन्होंने बरसाती कोट खरीदे। दुकानदार हैरान था कि इतनी भयंकर गरमी में बरसाती कोट खरीदने का क्या कारण हो सकता है ?

वहाँ से चलकर दोनों एक होटल में आए और 'मिनरल वाटर' की कुछ बोतलें खरीदीं। यह होटल विंटेम पहाड़ी की तलहटी में है। वहाँ से निकलकर क्रूज और वायना दोनों विंटेम पहाड़ी पर चढ़ने लगे। उन्हें ऊपर चढ़ते हुए बहुत लोगों ने देखा। होटल की नौकरानी मारिया सिल्वा ने उन्हें १००० फुट ऊँचाई पर पहुँचते देखा और उसके बाद जो कुछ हुआ, वह अब तक भी लोगों के लिए महान आश्चर्य एवं रहस्य का कारण बना हुआ है।

जैसे ही दोनों पहाड़ी पर चढ़े कोई उड़न तश्तरी के आकार की वस्तु पहाड़ी पर उतरती दिखाई दी। उस समाचार की पुष्टि नगर के प्रमुख दलाल की पत्नी श्रीमती ग्रंसिंद्रा सूजा ने भी की है। उन्होंने लोगों को बताया कि कोई विचित्र वस्तु आकाश से विंटेम पहाड़ी पर उतर रही थी। उसका रंग हरा, पीला और किनारे आग की तरह लाल रंग के थे।

विंटेम पहाड़ी घने जंगलों वाला स्थान है और पिछले २५ वर्षों से वहाँ अकसर उड़न तश्तरियाँ देखी जाती रही हैं। कुछ लोगों की तो निश्चित धारणा हो गई है कि जिस तरह पृथ्वीवासी मंगल, शुक्र आदि ग्रहों में जाने के लिए चंद्रमा को स्टेशन बना रहे हैं, उसी प्रकार अंतरिक्षवासियों ने ब्राजील के विंटेम पहाड़ी को यहाँ की परिस्थितियों के अध्ययन का स्टेशन बनाया है। यहाँ प्रायः प्रतिदिन कोई विचित्र वस्तु आकाश से उतरती और कुछ देर ठहरकर चली जाती है।

क्रूज और वायना के वहाँ पहुँचने के बाद लोगों ने उड़न तश्तरियाँ देखीं किंतु रात तक क्या हुआ, इस संबंध में कुछ पता नहीं चल पाया। प्रातःकाल कुछ लड़के शिकार खेलने के लिए पहाड़ी पर चढ़े। वहाँ उन्होंने दोनों युवकों को मरा हुआ देखा। बाद में यह खबर सारे शहर में फैल गई। पुलिस ने जाकर देखा, तो आश्चर्यचकित रह गई। उनकी मृत्यु बड़े ही रहस्यमय ढंग से हुई।

दोनों बरसाती कोट पहने थे, पर कोट के नीचे कपड़ों में जरा भी कहीं सलवट न थी, जिससे स्पष्ट हो कि किसी से हाथापाई नहीं हुई। दोनों के शरीर में कोई घाव नहीं थे। उनके पास एक परचा पड़ा पाया गया, उसमें कई दिन के प्रयोग के लिए कुछ गोलियों के नाम लिखे थे, उससे यह आशंका हुई कि संभवत: उन्होंने जहरीली ओषधि खाई होगी, पर अंत्यपरीक्षा में उनके शरीर में किसी प्रकार के विष का कोई प्रभाव नहीं पाया गया।

लाश के पास दो मुखौटे भी थे, उनमें साँस लेने के छेद तो थे पर आँखों के लिए कोई स्थान न था। कुछ रंगीन कागज भी बिखरे थे, उनमें कोई ऐसा सूत्र लिखा था, जिसका कोई भी वैज्ञानिक अर्थ नहीं निकाल पाया। दूसरे दो परचों में कुछ संकेत इस तरह थे—"बुधवार एक गोली, दवा तब लो, जब नीचे लेट जाओ। दूसरे पर लिखा था—शाम को ६ बजकर ३० मिनट पर गोली खाकर चेहरा मुखौटों से ढक लो और संकेत की राह देखो।"

तिलस्म-सी दीखने वाली इन तमाम बातों से अनुमान लगाया कि क्रूज और वायना अंतरिक्ष से आने वाले उस यान पर चढ़कर किसी अन्य ग्रह को चले गए। उनका सूक्ष्मशरीर हो गया। संभवत: वे शरीर को इस तरह सुरक्षित इसलिए छोड़ गए होंगे कि बाद में अंतरिक्ष से लौटकर आएँगे और अपने शरीर में पुन: प्रवेश कर लेंगे।

सूक्ष्मशरीर को बाहर निकालकर पुन: मृतशरीर में प्रवेश के उदाहरण अनेक पौराणिक गाथाओं में मिलते हैं। १९५९ में १७ मई को हिंदुस्तान में भारतीय सेना के अँगरेज अफसर श्री एल० पी० फैरल का प्रत्यक्ष प्रमाण प्राप्त अत्यंत रोचक वर्णन छपा था। उन्होंने उसमें बताया था—"मैंने एक वृद्ध योगी को एक मृत युवक के शरीर में प्रवेश करते देखा और उनसे संपर्क स्थापित कर सारा रहस्य ज्ञात किया।" उन्होंने इस लेख में स्वीकार किया है कि आत्मा की सत्ता शरीर से पृथक और स्वतंत्र है और वह

अपने अच्छे-बुरे कर्मानुसार पुनर्जन्म एवं अन्य लोकों का भी आवागमन करती है।

प्रो० जे० बी० राइन ने भी विचार संक्रमण (टेलीपैथी) और दिव्यदृष्टि (क्लेयर वायेन्स) के कई प्रयोगात्मक अनुसंधानों के द्वारा यह सिद्ध कर दिखाया कि भौतिक उपकरण न हों, तो भी दूसरों के विचार और अति दूरस्थ या भविष्य की घटनाओं का ज्ञान हो सकता है। यह भी प्रमाणित किया कि संसार में भिन्न-भिन्न भागों में जीव एक देह का परित्याग कर नया जन्म ग्रहण करते हैं। उनमें से कई को तो पूर्वजन्मों की स्मृति ऐसे ही बनी रहती है, जैसे सोकर जागने के बाद भी पिछले दिन की सारी घटनाएँ याद रहती हैं।

क्रूज और वायना की लाशों को सुरक्षित रखा जाता, तो संभव था, उक्त तथ्यों की आश्चर्यजनक खोज होती, किंतु पुलिस इन सब बातों को मानने के लिए तैयार न थी। पुलिस इंस्पैक्टर जोस ब्रिटेन-कोर्ट ने दोनों मुखौटे परीक्षण के लिए भेजे, पर उनमें किसी प्रकार रेडियोधर्मी तरंगों की बात पुष्ट नहीं हुई। प्रिटेन कोर्ट का दावा था कि जब वे लोग पहाड़ी पर आकर खड़े हुए होंगे, तब उनसे कोई वस्तु टकराई होगी। पर इस स्थिति में भी उनके शरीर में कहीं चोट के निशान तो होते। जिन परिस्थितियों में उनकी मृत्यु हुई, उन्हें देखकर तो यही लगता है कि उनके साथ सुनियोजित प्रयोग किया जा रहा था।

वायना के पिता ने उसके प्रयोग की कई विचित्र बातें बताईं और यह आशंका व्यक्त की कि इन दोनों का अंतरिक्षवासियों से कोई रेडियो संबंध था और उनकी हत्या अंतरिक्षवासियों ने ही की है।

जो सबसे आश्चर्य की बात है, वह है उस परचे का खो जाना, जो पुलिस ने मृतकों के पास से प्राप्त किया। उस परचे को पुलिस ने तिजोरियों के अंदर पहरे में रखा था, पर उस कागज को कोई बड़े

ही रहस्यमय ढंग से निकाल ले गया। उसका आज तक पता नहीं चल पाया।

यद्यपि यह सब अनुमान ही है कि हत्या अंतरिक्षवासियों ने की। संभवतः मृत आत्माएँ वापस आतीं, पर उनके शव सुरक्षित नहीं रखे गए और यह कि उस पुरजे में कुछ ऐसे सूत्र थे, जिनके सहारे उड़न तश्तरियों का रहस्य पकड़ा जा सकता था। यदि भौतिक उपकरणों के माध्यम से पृथ्वीवासी दूसरे ग्रहों में जा सकते हैं, तो अंतरिक्षवासी भी यहाँ आ सकते हैं।

इस घटना का कारण क्या है ? इस बारे में अधिकारपूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता, लेकिन तथ्य, स्थिति और अन्यान्य कारणों से उक्त अंतरिक्षविज्ञानियों की मृत्यु में अंतरिक्षवासी कहीं-न-कहीं कुछ-न-कुछ अवश्य अहम् भूमिका रखते हैं, यह असंदिग्ध है। ब्रह्मांड में ऐसे अनेक ग्रह-नक्षत्रों का अस्तित्व है, जिनमें हमारे ही समान अथवा हमसे भी अधिक विकसित सभ्यता वाले प्राणी निवास करते हैं। यह तथ्य अब कल्पना मात्र नहीं रहा, वरन प्रमाणों के आधार पर अधिकाधिक स्पष्ट होता जा रहा है। इन सुविकसित प्राणियों के साथ संपर्क बनाकर जीवधारियों की समग्र चेतना को अधिक सुविकसित किया जा सकेगा और लोक-लोकांतरों के सहयोगी आदान-प्रदान से कितना लाभ उठाया जा सकेगा, उसकी मधुर कल्पना ही रोमांचित कर देती है।

अन्य ग्रहों से संपर्क—सहयोग

मास्को स्थित स्टर्नवर्ग राज्य ज्योति इंस्टीट्यूट के डा० निकोलाई एस० कार्दाशेव का दावा है कि "एक अत्यंत विकसित सभ्यता का पता लगा लिया गया है।" इस विराट विश्व में जीवनतत्त्व की संभावना किस-किस ग्रह-उपग्रह पर हो सकती है, इसके लिए विभिन्न स्तर की खोजें विभिन्न यंत्र-उपकरणों द्वारा बहुत ही गंभीरतापूर्वक हो रही हैं। अमेरिका की 'नेशनल रेडियो

एस्ट्रोनोमी आवजरवेटरी' द्वारा विनिर्मित ओजमा प्रोजेक्ट यंत्र पर रेडियो-टेलिस्कोप और एस्ट्रोरेडियो सिस्टम की दोनों पद्धतियाँ काम कर रही हैं, जिनकी सहायता से ग्रह-नक्षत्रों की परिस्थितियों का क्रमिक ज्ञान संतोषप्रद रूप से प्राप्त होता चला जा रहा है। अब तक की उपलब्धियों से अमेरिकी वैज्ञानिक इस तथ्य को अधिक दृढ़तापूर्वक व्यक्त करने लगे हैं कि पृथ्वी जैसा न सही—किसी-न-किसी प्रकार का जीवन अन्य अनेक ग्रहों में भी मौजूद है।

आवश्यक नहीं कि अन्य ग्रहों के निवासी मनुष्य जैसी ही आकृति-प्रकृति के हों। वहाँ की मिट्टी और परिस्थिति जैसी भी होगी, वैसे ही उनके शरीर बन गए होंगे, वैसे ही आहार-विहार के अभ्यस्त बने होंगे। इतने पर भी जीव का स्वाभाविक गुण, चिंतन और विकास उनमें अवश्य ही विद्यमान रहा होगा। चेतना का स्वभाव विकासोन्मुख होता है। विकसित चिंतन, विकसित परिस्थितियाँ भी उत्पन्न कर सकता है। यह ऐसे मूलभूत आधार हैं, जिनको सामने रखने से उस आशा की चमक बढ़ती ही चली जा रही है कि अंतर्ग्रही जीवन का अस्तित्व विद्यमान है और इसे पारस्परिक सहयोग से अधिक शीघ्र और अधिक मात्रा में विकासोन्मुख बनाया जा सकता है।

वह दिन कितना सुखद होगा, जब हम विश्वमानव की सुखद संभावनाओं को ही कार्यान्वित करने तक सीमित न रहेंगे, वरन ब्रह्मांड जीवन को स्नेह-सहयोग से सींचकर विसंगठित बिखरे हुए जीवन को एकता के सूत्र में बाँधकर स्वर्गीय संभावनाओं को साकार कर सकने में समर्थ होंगे।

एक प्रश्न यह भी है कि अन्य ग्रहों पर जीवन हो तो क्या वहाँ तक हमारा आवागमन संभव हो सकता है? क्योंकि बिना प्रत्यक्ष संपर्क अथवा आदान-प्रदान के जीव सत्ताएँ ब्रह्मांड में अपने स्थान

पर बनी रहकर भी अन्य लोकवासियों के लिए कुछ अधिक उपयोगी सिद्ध न हो सकेंगी।

तारकों की दूरी को देखते हुए और मनुष्य-प्राणी की सीमित आयु को देखते हुए यह खाई पटती नहीं दीखती कि उन लोकों तक पहुँचना और वापस लौटना संभव हो सके। अपने आधुनिकतम अंतरिक्ष यानों द्वारा यदि निकटतम तारक की यात्रा की जाए, तो उसमें कम-से-कम चार प्रकाश वर्ष लगेंगे। एक प्रकाश वर्ष अर्थात लगभग ६० अरब मील की दूरी।

वैलेस सलीवान ने अपनी पुस्तक 'वी आर नॉट अलोन'—'हम अकेले नहीं हैं' पुस्तक में अंतरिक्ष यात्राओं के एक नवीन आधार का उल्लेख किया है। यह आधार २१ सेंटीमीटर अथवा १४२० मेगा साइकिल वेवलेंग्थ के रेडियो कंपनों पर अवलंबित है। हाइड्रोजन परमाणुओं के विकिरण की यह स्वाभाविक कंपन गति है। इसे करतलगत किया जा सकता है। तब अंतरिक्ष यात्रा के लिए कम समय, कम श्रम एवं कम धन लगाकर ही अंतर्गृही आवागमन संभव हो सकता है।

प्रकाश की चाल से चल सकने वाले अंतर्गृही यान-तारकों की दूरी को देखते हुए वहाँ पहुँचने में और लौटने में जितना समय लेंगे, उसमें मनुष्य की कई पीढ़ियाँ बीत जाएँगी। इतनी लंबी प्रतीक्षा में बैठा रहना अंतरिक्ष जिज्ञासुओं के लिए कठिन है। अस्तु, वह आधार ढूँढ़े जा रहे हैं, जो उस गति में तीव्रता ला सकें। सौभाग्य से वह आधार मिल भी गया है। मेगा साइकिल वेवलेंग्थ के सहारे यान इतनी तेजी से उड़ सकेंगे कि अभीष्ट अवधि के अंदर ही अंतर्ग्रही आवागमन संभव हो सके।

मनुष्य की गरिमा महान है, उसकी बुद्धि को दैवी वरदान ही कहा गया है। अलभ्य आकांक्षा, तन्मयता, तत्परता, समग्र एकाग्रता और प्रचंड श्रमशीलता के चारों आधार मिल जाने पर मानवी बुद्धिमत्ता

सीमा की समस्त मर्यादाओं को लाँघ जाती है। वामन भगवान की तरह वह तीन चरणों में समस्त विश्व-ब्रह्मांड को नाप सकती है। नापने जा भी रही है। इस बुद्धिमत्ता का जब कभी सदुपयोग होगा, तो मनुष्य पर देवताओं को निछावर किया जा सकेगा और तब इस धरती की गरिमा स्वर्ग से बढ़ी-चढ़ी ही होगी।

कभी यह कहा जाता था कि अंतर्ग्रही उड़ान की गति अधिक-से-अधिक प्रकाश की गति हो सकती है। बह्मांड विस्तार को ध्यान में रखते हुए इस मंद गति से अन्य ग्रहों की खोजकर सकना अति कठिन है। उतनी लंबी उड़ान के लिए ईंधन से चलने से वे यान अत्यंत भारी हो जाएँगे। फिर इतने लंबे समय तक मनुष्य जीवित भी नहीं रह सकेंगे। उतने दिन तक खाने-पीने की सामग्री लेकर चलना भी संभव नहीं।

उन सभी कठिनाइयों का हल अब मिलता जाता है। एक हल के अनुसार लंबी मंजिल पार करने के लिए अपने यानों को थोड़ी ही दूर उड़ना पड़ेगा, उसके बाद अभीष्ट ग्रह की आकर्षण शक्ति में जब प्रवेश पा लिया जाएगा, तो अपने यान को उड़ने की जरूरत न पड़ेगी। मंजिल स्वयं ही खिंचती हुई अपने पास चली आएगी अर्थात वे ग्रह स्वयं ही हमें खींचने लगेंगे। अपने यान के इंजन बंद कर दिए जाएँगे किंतु यात्रा क्रम मजे से चलता रहेगा। ऐसी दशा में ईंधन लेकर चलने की जरूरत न पड़ेगी। शीत निद्रा में सुलाकर यात्री को दीर्घजीवी बनाया जा सकेगा और अन्न-जल तथा वायु की जितनी मात्रा यान में भरी जाएगी, उसी को बार-बार शुद्ध करके प्रयुक्त होने योग्य बनाया जाता रहेगा और उतनी ही सामग्री से मुद्दतों तक गुजर-बसर होती रहेगी। अतएव निकट भविष्य में उन सभी कठिनाइयों को सरल बना लिया जाएगा, जो इन दिनों अतीव कठिन और निराशाजनक प्रतीत होती हैं।

ब्रह्मांड शोधकार्य के उपयुक्त एक अति महत्त्वपूर्ण विज्ञान हाथ में आया है—'रिलेटिविस्टिक वेलोसिटी' अर्थात आपेक्षित तीव्र गति। इस आधार पर पाँच हजार वर्षों की यात्रा दस वर्ष में ही की जा सकेगी। इस विज्ञान का विवेचन करते हुए विज्ञानी डोनाल्ड ने उसे गुरुत्वाकर्षण का उल्लंघन कहा है। उड़न तश्तरियों का दूरवर्ती ग्रह-नक्षत्रों से धरती पर आना-जाना इसी आधार पर संभव है।

पृथ्वी द्रुत गति से अपनी धुरी पर घूमती है और सूर्य की परिक्रमा करती हुई बिना पंख के उड़ती है। इस गति के फलस्वरूप उसमें गुरुत्वाकर्षण पैदा होता है। धरती की चीजों को यह गुरुत्वाकर्षण ही बाँधे रहता है और हमें पता भी नहीं चलता कि हम सब भी घूम रहे हैं। यदि गुरुत्वाकर्षण न होता, तो यह गति हमें उछालकर ब्रह्मांड में ऐसा फेंक देती कि फिर कभी पता-ठिकाना ही न मिल सके।

यदि किसी वस्तु का अपना गुरुत्वाकर्षण हो और उसका वेग पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण को निरस्त कर सके, तो फिर वह अनंत ब्रह्मांड में कहीं भी सरलतापूर्वक आ-जा सकता है। पृथ्वी से जो राकेट अंतरिक्ष में फेंके जाते हैं, उनमें भारी मात्रा में ईंधन खरच करने की आवश्यकता इसलिए पड़ती है कि गुरुत्वाकर्षण के दबाव से संघर्ष करते हुए वे ऊपर उठ सकें। यदि किसी यान में अपना गुरुत्वाकर्षण हो, तो फिर उसकी गति अंतरिक्षीय स्तर की होगी। तब दिल्ली से अमेरिका पहुँचने के लिए केवल पाँच मिनट पर्याप्त होंगे। अभी तो हर यान को अंतरिक्ष में अपनी ही शक्ति से किसी दिशा में आगे बढ़ना ही पड़ता है, वह ठहर नहीं सकता। यदि ठहर जाए, तो कोई-न-कोई ग्रह-नक्षत्र उसे अपनी आकर्षण शक्ति से पकड़कर घसीट लेगा। ठहरना उसी यान के लिए संभव हो सकता है, जिसमें अपना गुरुत्वाकर्षण हो। ऐसा कोई यान हो, तो उसे पृथ्वी की पकड़ से बाहर निकलने के लिए तो थोड़ा जोर लगाना पड़ेगा। पीछे स्वतंत्र होकर जब वह कहीं ठहरेगा, तो वहाँ किसी ग्रह की आकर्षण

शक्ति उसे अपनी ओर अपनी शक्ति से बुलाने लगेगी। इसका अर्थ यह हुआ कि उस यान को वहाँ तक चलना पड़ेगा, जहाँ ठहरने पर वह इच्छित ग्रह की ओर सीधा जाने लगे। बस वहाँ से वह मंजिल की ओर चलेगा, यह कहने की अपेक्षा यह कहना अधिक उपयुक्त हेागा कि मंजिल उसकी ओर चलेगी। बस, यात्रा तुरत-फुरत पूरी होगी। यह सफलता मिलने पर चंद्रमा में पहुँचने के लिए साढ़े तीन घंटे, शुक्र के लिए ३६ घंटे, मंगल के लिए ४८ घंटे और बृहस्पति तक पहुँचने के लिए ६ दिन पर्याप्त होंगे। यह विलोम गुरुत्वाकर्षण की शक्ति है, उसी का विकास करने में रिलेटिविस्टिक वेलोसिटी की गहराई से शोध की जा रही है। ऐलेग्जेंडर सेवेरस्की और वर्क हार्ड हीम इस शोध के अग्रणी माने जाते हैं। विभिन्न देशों की अनुसंधानशालाएँ इस दिशा में अनेकानेक प्रयोग-परीक्षण करने में संलग्न है।

लंबे वर्षों में पूरी हो सकने वाली यात्रा के लिए यह तरीका खोज निकाला गया है कि अंतरिक्ष यान के रवाना होते ही 'हाइवर नेशन' प्रक्रिया द्वारा यात्री को शीतल करके गहरी निद्रा में सुला दिया जाए और अब लक्ष्य स्थान निकट आए, तब स्वसंचालित प्रक्रिया उसे गरमी पहुँचाकर जगा दे। ऐसा करने से उस यात्री पर समय का प्रभाव न पड़ेगा। वह जिस आयु का सोया था, उसी आयु का शरीर लेकर जगेगा। लौटने पर भी इसी पद्धति को अपनाया जाएगा, फलतः सैकड़ों वर्षों की लंबी अंतरिक्षीय यात्रा कर लेने पर भी वह न तो बूढ़ा होगा और न मरेगा, उसकी जवानी यथावत बनी रहेगी।

अन्य ग्रहों से संपर्क

ब्रह्मांडीय भाषा का स्वरूप, इस प्रश्न पर विचार करने के लिए विशेषज्ञों के दो अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन हो चुके हैं। इनका कहना है कि गणित सिद्धांतों के आधार पर ऐसी भाषा बन सकती है। गणित की आवश्यकता किसी भी लोक के निवासियों को पड़ेगी ही और

उसका क्रम वही १, २, ३, ४, ५, वाला सर्वत्र होगा। वृत्त की परिधि और उसके व्यास का अनुपात एक स्थिर संख्या होती है। इसी आधार पर ऐसी भाषा बन सकती है, जिसे अन्य लोक के बुद्धिमान प्राणी समझ सकें। सन् १९६१ में ड्रेक और औलिवर नामक वैज्ञानिकों ने ऐसी भाषा की एक रूपरेखा भी तैयार की थी, यह रेडियो-तरंगों पर आधारित है। हाइड्रोजन अणु से निकलने वाले विकिरण को इकाई माना गया है। इन तरंगों की लंबाई पर १२२१ रेडियो धड़कन भेजी जाएँगी और हर दो धड़कनों के बीच समान अंतराल डाला जाएगा। इस आधार पर किसी भी लोकवासियों के लिए चित्र भेजे जा सकेंगे। इन आकृतियों को देखकर चित्रों के आदान-प्रदान का सिलसिला चलेगा। पृथ्वी पर भी भाषा का विकास इसी चित्र-प्रक्रिया के आधार पर हुआ है। अभी भी जहाँ भाषा का आधार न मिले, वहाँ चित्र बनाकर ही पृथ्वीवासी विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। ब्रह्मांडीय भाषा का सिलसिला भी इस माध्यम से आरंभ होगा।

अन्य लोकों के साथ रेडियो संपर्क बनाने के लिए २१ सेमी० हाइड्रोजन बैंड उपयुक्त समझा गया है। स्काटिश वैज्ञानिकों ने सूर्य के इर्द-गिर्द एक अंतरिक्ष यान घूमते देखा है। इसे एप्साइलोन वाटिस तारे के निवासियों द्वारा अपने और मंडल की खोज-खबर लेने के लिए भेजा हुआ माना गया है। वैज्ञानिक इस प्रयत्न में हैं कि उससे संपर्क बनाकर अंतर्गृही आदान-प्रदान की एक नई कड़ी जोड़ी जाए।

इन संभावनाओं और प्रयत्नों के देखते हुए यह आशा की जा सकती है कि निकट भविष्य में ब्रह्मांड में अवस्थित बुद्धिमान प्राणी परस्पर संपर्क स्थापित करेंगे और परस्पर आदान-प्रदान की व्यवस्था बनाएँगे। एक ऐसे आविष्कार के प्रयास भी चल रहे हैं। इसका पूर्ण विकास हो जाएगा, तो यह संसार इतने समीप आ जाएगा कि भारत

और अमेरिका की दूरी ही नहीं, विश्व-ब्रह्मांड ही सिमटकर एक बिंदु पर आ जाएगा।

ऐसी संभावना के प्रथम यंत्र का नाम है—'टेल स्टार'। इसमें न तो कोई विध्वंसक है और न ही कोई ऐसे उपकरण जो अंतरिक्ष यात्रा के काम आएँ। इस सबसे हटकर नया ही प्रयोग हुआ है, उसे विश्वशांति और कल्याण के लिए अणु सत्ता का उपयोग की संज्ञा दी जा सकती है। उसमें ऐसी संचार और ग्रहण-व्यवस्था रखी गई है, जिसकी सहायता से दुनिया के किसी भी भाग में बैठे मनुष्य को देखना, बात-चीत करना आदि संभव हो जाएगा। अभी विशेष प्रग्रहण केंद्रों (रिसीविंग स्टेशन्स) के माध्यम से ही यह व्यवस्था संभव होगी, पर 'टेल स्टार' का विस्तृत अध्ययन एक दिन मनुष्य-मनुष्य के बीच बेतार के तार की तरह संबंध सूत्र बन जाएगा, ऐसी संभावना उसके निर्माता डा० पियर्स ने स्वयं ही व्यक्त की है।

'टेल-स्टार' एक प्रकार का चक्र है, जिसमें भीतर तो वैज्ञानिक उपकरण हैं और बाहर संदेश प्रेषित (ट्रांसमिट) और ग्रहण (रिसीव) करने वाली विचित्र प्रणाली का अंकन किया गया है। इसमें गहरे रंग की ३६०० सौर सेल (ये बैटरियाँ जो सूर्य की ऊर्जा से चलती हैं) और भीतर पट्टियों की एंटेना हैं। ऊपर वाली पट्टी ६३९० मेगासाइकिल्स पर संदेश ग्रहण करती है अर्थात इस फ्रीक्वेंसी पर कहीं से भी प्रेषित समाचार या वृत्तचित्र को वह ग्रहण कर लेगा और निचली पट्टी ४१७० मेगासाइकिल से उस संदेश या चित्र को सारी सृष्टि में फैला देगी। पिछले दिनों अंतरिक्ष यात्री कूपर की यात्रा को अमेरिका के अतिरिक्त इंग्लैंड, फ्रांस, जर्मनी आदि कई देशों में दिखाया गया, वह टेल-स्टार की सहायता से ही था।

'टेल-स्टार' की तकनीकी (टेक्निकल) रचना मानव शरीर से कम आश्चर्यजनक नहीं है। जिस प्रकार हमारे शरीर में ७२ हजार

नाड़ियों का जाल बिछा है और वह सब कुछ ऐसे शक्ति केंद्रों (कोश या चक्रों) उपकेंद्रों से संबद्ध है, जहाँ की शक्ति से इन नाड़ियों के माध्यम से बाह्य और अंतर्जगत से संबंध और सामंजस्य स्थापित होता है। शरीर के एक स्थान की प्रतिक्रिया दूसरे अंगों पर होती है, वह इन नाड़ियों के माध्यम से होती है, उसे विशेष शक्ति-कोशों की अंतर अनुभूति (सेल्फ रियलाइजेशन) कह सकते हैं, उसी प्रकार टेल स्टार में भी हजारों ग्रहण और प्रेषण (रिसीविंग एंड ट्रांसमिटिंग) प्रणालियाँ रखी गई हैं, जिससे उन्हें विश्व के किसी भी भाग में सुना और देखा जा सके।

टेल-स्टार का कुल वजन १७० पौंड और व्यास केवल ३४ इंच है, जिस तरह एक बालक किसी पतंग को मजे से आकाश में उड़ा लेता है, उसी प्रकार टेल-स्टार को अंतरिक्ष में पृथ्वी की कक्षा में स्थापित कर दिया जाता है। वहाँ से वह अपना काम प्रारंभ कर देता है। अभी इसे केवल अमेरिका की वैल टेलीफोन प्रयोगशाला ने तैयार किया है। उसे छोड़ने के लिए एंडोवर नामक स्थान में एक विशाल एंटेना निर्मित किया गया है। अभी केवल यूरोप में ही कुछ ऐसे केंद्र स्थापित हुए हैं, जो इस संचार-व्यवस्था का लाभ उठा रहे हैं, पर वह दिन दूर नहीं जब इसकी सहायता से चंद्रमा और शुक्र आदि ग्रहों में पहुँचे लोगों से भी बात-चीत करने में सहायता मिलेगी।

'टेल-स्टार' की मुख्य भूमिका यह है कि वह धरती से प्राप्त संकेतों को दस अरब गुना शक्ति देकर बढ़ा देता है और फिर उस बढ़ी हुई शक्ति से उस संदेश को धरती की ओर प्रेषित करता है। उपग्रह से संकेत भेजने की शक्ति 'डाईवाट' की है, जो पृथ्वी पर आने तक घटकर अरबों हिस्से के बराबर रह जाती है। इस कारण सामान्य स्तर पर उसे सुना जाना संभव नहीं होता, इसलिए एंडोवर (स्थान का नाम) १७७ फुट ऊँचा एंटेना (उपग्रह संचार-केंद्र) बनाया गया। यह संकेतों की आवाज को फिर बढ़ा देता है, जिससे

सामान्य संचार-व्यवस्था का कार्यक्रम चलने लगता है अर्थात एंडोवर की फ्रिक्वेंसी पर यूरोप के (अभी) सभी देश अपने रेडियो और टेलीविजन सेटों पर सुन और देख लेते हैं। बाद में यह व्यवस्था सारे संसार के लिए उपलब्ध हो जाएगी।

इस व्यवस्था पर भारी व्यय लगता है। ३० लाख डालर की धनराशि केवल एक बार के प्रयोग में व्यय होती है। इतना व्यय हर बार उपग्रह भेजने पर उठाना पड़ता है। फिर यहाँ पृथ्वी में अनेक ऐंटेना स्थापित करने का व्यय भी बहुत अधिक है। अमेरिका में १७७ फुट का शीवाल ऐंटेना बना है, उसका ३७० टन भार है और डिगरी के बीसवें भाग तक नियंत्रण कर सकता है, उसका निर्माण-व्यय कई करोड़ डालर तक बैठा है, इसलिए यह व्यवस्था सबके लिए संभव नहीं। इंग्लैंड में 'गूनहिली डाउन्स', फ्रांस में ब्रिटोनी और पश्चिमी जर्मनी में म्यूनिख के बाहर बिल्हेम में ही ऐंटेना निर्मित होने की संभावनाएँ हैं, शेष देश तो अभी उसकी प्रारंभिक जानकारी जुटाने में ही संलग्न हैं। सभी देशों में व्यवस्थाएँ हो जाएँगी, तो एक महाद्वीप से संचार का सीधा संबंध जुड़ जाएगा और तब अंतरिक्षयात्रियों के संदेश, उनके चित्र आदि भी यहाँ उतने ही साफ देखे और सुने जा सकेंगे।

११ जुलाई १९६२ को पहला टेल-स्टार आकाश में स्थापित किया गया। तब वह एंडोवर की ऐंटेना से उड़कर अपने नियत स्थान पर चक्कर लगाने लगा। २५ टन वजन और नकली रबड़ मिले डेक्रोन तंतुओं से बने एंडोवर ऐंटेना ने आध घंटे में ही संदेश प्रणाली का श्रीगणेश किया। उधर ह्वाइट हाउस में अमेरिका के उपराष्ट्रपति टेलीफोन हाथ में लेकर खड़े थे। इधर फ्रैड कैपेल एंडोवर से बोले—"आप जानते होंगे कि यह आवाज टेल-स्टार उपग्रह द्वारा प्रसारित की जा रही है, आपको मेरी आवाज कैसी सुनाई दे रही है।" उधर से उपराष्ट्रपति ने अभिवादन का उत्तर इन शब्दों में

दिया—''मि० कैपेल, आपकी आवाज बिलकुल साफ सुनाई दे रही है।'' यह उद्घाटन था, इसके बाद लाखों अमेरिकियों ने सारे पेरिस को अपने टेलीविजनों में देखा। वहाँ की प्रत्येक वस्तु साफ ऐसे ही दिखाई दे रही थी, जैसे कोई आकाश में बैठकर विस्तृत भूभाग का दृश्य देख रहा हो। पेरिस का संगीत दृश्य और स्वर बिलकुल स्पष्ट और साफ सुने गए। फिर इंग्लैंड का कार्यक्रम दिखाया गया। टेल-स्टार से अंतरिक्ष की अनेक महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ मिलने के भी समाचार मिले हैं। अनुमान है कि यह टेल-स्टार दो-सौ वर्ष तक काम करता रहेगा।

वैज्ञानिक इस बात को मानते हैं कि यांत्रिक संचार और दूरदर्शन (टेलीविजन) प्रणाली शरीर की संचार और दर्शन प्रणाली का नमूना है, वे यह भी मानते हैं कि मनुष्य के मस्तिष्क में उठने वाले विचारों को भी एक नियत फ्रिक्वेंसी पर ग्रहण किया जा सकता है, पर उसके लिए भेजे जाने वाले संदेशों की शक्ति टेल-स्टार की तरह किसी अणु शक्ति द्वारा बढ़ा दी जाए, उसी प्रकार ग्रहण करने वाला भी अपनी शक्ति को उतना बढ़ा ले कि वह हवा में तैरते हुए संदेशों में से अपनी फ्रिक्वेंसी के संदेश की शक्ति को बढ़ाकर ग्रहण कर ले। ऐसे चक्र, ऐसे संस्थान में ३६०० बैटरियों की तरह उन विचारों को शक्ति दे सकें, शरीर में केवल उनके विकास की आवश्यकता है, इसकी पुष्टि वैज्ञानिक संचार-उपग्रह टेल-स्टार से कर रहे हैं।जिस दिन यह आविष्कार पूरा हो जाएगा, उस दिन मनुष्य मनुष्य तो क्या संपूर्ण ब्रह्मांड एक बिंदु पर आ जाएगा। फिर किसी भी ग्रह से, वहाँ निवासियों से संपर्क किया जा सकेगा और ब्रह्मांडीय आदान-प्रदान की संभावनाएँ, जो इन दिनों स्वप्न-सी लगती हैं, शीघ्र ही साकार हो सकेंगी, परंतु यह अध्ययन और निरीक्षण मनुष्य को संकुचित परिधि और क्षुद्र अहं की सीमाओं से बाहर निकालने के लिए भी प्रेरित-प्रोत्साहित करें, तो इन उपलब्धियों को भी सफल सार्थक कहा जाएगा। □

जानें या न जानें, सच तो सच है

मनुष्य अभी तक अपने आप को सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी मानता रहा है। यह भी माना जाता रहा है कि परमात्मा ने उसे जितने श्रेष्ठ अनुदान, विभूतियाँ और विशेषताएँ दी हैं, उतनी अन्य किसी प्राणी को कहीं भी नहीं मिली हैं। इस मान्यता ने उसे गौरवान्वित करने की अपेक्षा उसका दंभ ही अधिक बढ़ाया है। लेकिन ऊँट जब पहाड़ के नीचे आता है, तभी यह पता चलता है कि वास्तव में ऊँट ही सबसे ऊँचा नहीं है। मनुष्य के साथ भी पिछले दिनों कुछ इस प्रकार की स्थिति घटी है, जब अन्य ग्रहों और नक्षत्र-तारकों में जीवन के अस्तित्व का पता चला और यह पता चला कि अन्य लोकों में पृथ्वी से भी अधिक उन्नत सभ्यता है, तो मनुष्य का यह दंभ टूटा ही है।

भूतकाल में जो कुछ जाना या माना गया था, उसे सच ही माना जाए, यह आवश्यक नहीं। ज्ञान अनंत है। सत्य असीम है। उसका एक अंश ही मनुष्य की सीमित बुद्धि के लिए जान सकना संभव है। प्रगति की क्रमबद्ध यात्रा पर चलते हुए हम सत्य के अधिक निकट पहुँचते जाते हैं। इसलिए हमें सत्य की हर नई किरण का स्वागत करने के लिए तैयार रहना चाहिए। पूर्वाग्रहों पर अड़कर बैठ जाना और जो कहा जाता रहा है, उसी को सच मानते रहना बुद्धिमत्ता का चिह्न नहीं है।

कभी धरती को केंद्र और अन्य ग्रह-तारकों को उसकी परिक्रमा करता हुआ माना जाता था। आकाश को चादर की तरह चपटा माना जाता था, पर अब वैसी मान्यता नहीं रही। चंद्रमा की गणना अब नव-ग्रहों में से हटाकर पृथ्वी के उपग्रहों में कर दी गई है। सौर-मंडल में तीन ग्रह और नए सम्मिलित हो गए हैं।

आकाश के बारे में अतीतकाल के लोग विभिन्न मान्यताएँ रखते रहे हैं। यूनानी लोगों की मान्यता थी कि बादलों में निवास करने वाले देवताओं का सारे आकाश पर राज्य है, वह लोहे की तरह कड़ा है और धरती के कंधों पर टिका है।

मैक्सिकोवासी २२ आकाश मानते थे। धरती से ऊपर १३ आकाश स्वर्ग हैं, जिनमें से सिर्फ पहला ही आँखों से दिखाई देता है। धरती के नीचे ९ आकाश हैं—जो नरक हैं।

दक्षिण अमेरिका के रैड इंडियन सात आकाश मानते हैं, जिनमें से पाँच पृथ्वी के ऊपर तथा दो नीचे हैं। वे इनके रंग भी भिन्न बताते हैं, क्रमशः नीला, हरा, पीला, लाल, सुनहला, बैंगनी और सफेद। इन सबके अधिपति अलग-अलग आकृति-प्रकृति के देवता लोग हैं।

मान्यताएँ पत्थर की लकीर नहीं हैं। आज जिस आधार पर हम एक बात को सत्य मानते हैं, कल आधार बदल जाने पर परिभाषा बदल जाएगी और पुराने प्रतिपादन को छोड़ने के लिए विवश होना पड़ेगा। इसमें भूतकाल के प्रतिपादनकर्त्ताओं का अपमान नहीं है। उनने अपने समय की परिस्थितियों के अनुरूप जो सर्वोत्तम सत्य समझा उसे कहा, पर किसी ने भी यह नहीं कहा कि जो उनके द्वारा कहा जा रहा है, वह अंतिम है या सत्य है। नेति-नेति का घोष करते हुए तत्त्वदर्शियों ने सदा यह कहा है कि जो बताया जा रहा है, वह अंतिम नहीं है, पूर्ण नहीं है। 'स्याद्वाद' दर्शन में इसी तथ्य को स्वीकार किया गया है और भावी अन्वेषण एवं विचार-परिवर्तन के लिए पूरी गुंजाइश रखी गई है।

चंद्रमा के संबंध में मनुष्य ने न जाने कब-कब से, क्या-क्या स्वप्न सँजोकर रखे थे। कितनी मधुर कल्पनाएँ उसके साथ जोड़कर रखी थीं। विज्ञान ने उन्हें अस्त-व्यस्त करके रख दिया।

पाश्चात्य साहित्य में उसे चंद्रमुखी महिला के रूप में चित्रित किया है। राहु के आक्रमण से पड़ने वाला चंद्रग्रहण हमारे लिए चिंता का विषय था और उसे विपत्ति से छुड़ाने के लिए जप, दान किए जाते थे।

चंद्रमा अमृत का घट है। उसकी चंद्रिका अमृत बरसाती है। चंद्र प्रकाश में शीतल किया हुआ दूध शांतिदायक होता है। शरद-पूर्णिमा के चंद्र प्रकाश में खीर का भोजन करते हुए उसमें अमृत मिश्रण की आशा की जाती है। किसान शुक्ल पक्ष में चंद्रमा को साक्षी बनाकर बीज बोते हैं। चंद्रमा का ज्यों-ज्यों रूप निखरता है, त्यों-त्यों समुद्र कोटि-कोटि हाथ पसारकर उसे अपने अंक में आबद्ध करने के लिए व्याकुल होता है। ज्वार-भाटे की यही साहित्यिक कल्पना है। स्त्रियों के मासिकधर्म की चंद्र कलाओं के साथ संगति बैठाई जाती है।

पौराणिक गाथा के अनुसार चंद्रमा की उत्पत्ति समुद्र-मंथन से उत्पन्न रत्नों के रूप में हुई। उसे शिवजी के मस्तक पर निवास करते रहने का स्थान मिला। दक्ष प्रजापति की २७ कन्याएँ चंद्रमा को विवाही गईं। इनमें से रोहिणी को अधिक प्यार करने से रुष्ट अन्य २६ पत्नियों ने जब अपने पिता से शिकायत की, तो इस पक्षपात के लिए उसे दक्ष के शाप से कलंकी होना पड़ा। इंद्र के द्वारा अहिल्या के साथ छल करने में सहयोग करने के कारण गौतम ऋषि के शाप से उसे कलंकी बनना पड़ा। मणि चुराने के अभियोग में शाप लगने के कारण भद्र पद शुक्ल चतुर्थी को चंद्र दर्शन हेय घोषित किया गया। स्त्रियाँ गणेश चतुर्थी को चंद्र दर्शन के उपरांत ही कुछ खाती हैं और चंद्र देवता से सुहाग का वरदान माँगती हैं। रजनीपति निशानाथ चंद्रमा को काम-उमंग उत्पन्न करने वाला बताया गया है। प्रेयसी की चंद्रमुख से तुलना कवि न जाने कब से करते आ रहे हैं।

मुसलमान ईद का चाँद देखकर अपना व्रत-उपवास पूर्ण करते हैं। ज्योतिषशास्त्र के अनुसार चंद्रमा एक पूर्ण ग्रह है। उसे शास्त्राधार का मध्यबिंदु मानकर ग्रह गणित आगे चलता है, यात्रा मुहूर्तों में चंद्रमा की दिशा स्थिति को ध्यान में रखा जाता है। मनुष्यों पर जब चंद्र-दशा आती है अथवा जब अंतर-प्रत्यंतर आते हैं, तब शुभ लाभ का फलित बताया जाता है। सप्ताह का एक दिन चंद्रमा के नाम पर ही निर्धारित है। उस दिन को मंगलमय माना गया है। बच्चे उसे चंदा मामा मानते रहे और माताएँ उस चंद्र खिलौने को ला देने का आश्वासन न जाने कब से अपने नन्हें शिशुओं को देती रही हैं।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार चंद्रमा २००० मील व्यास का एक वर्तुलाकार निर्जीव पिंड है, जो सूर्य के प्रकाश से चमकता है। उसका बोझ पृथ्वी की तुलना में ८१वाँ अंश ही है। उसकी गुरुत्वाकर्षक शक्ति पृथ्वी के छहवें भाग के बराबर है। वहाँ न पानी है और न हवा। न कोई जीव है और न वनस्पति। शब्द का सर्वथा अभाव। नीरव निस्तब्धता का साम्राज्य। विश्व किरणों की, उल्काओं की, अणु किरणों की—निरंतर वर्षा होती रहने से वहाँ की चट्टानें धूल बन गईं हैं। उसकी परतों में नाइट्रोजन, गंधक, फास्फोरस, कार्बन डाइआक्साइड तथा कतिपय धातुएँ विद्यमान हैं। रात को वहाँ अति शीत होता है और दिन को अति ताप। वह पृथ्वी की परिक्रमा २,४०,००० मील दूर रहकर करता है।

चंद्रमा के संबंध में अब तक मान्यताएँ प्रतिपादित और प्रचलित रही हैं। डार्विन का कथन है—"पुरातन में पृथ्वी तप्त द्रव थी। उसमें अनेक विस्फोट होते थे। वह तप्त रस सूर्य की परिक्रमा कर रहा था। इसी बीच पृथ्वी के विस्फोट और सूर्य के आकर्षण से पृथ्वी का एक टुकड़ा उचटकर अलग हो गया

और स्वतंत्र रूप से घूमने लगा। यही चंद्रमा है। पृथ्वी के जिस स्थान से यह टुकड़ा टूटा, वहाँ प्रशांत महासागर का गड्ढा बन गया।

डा० वा वाईज ने भी थोड़े हेर-फेर के साथ इसी मत की पुष्टि की है। उनने धूमकेतु, विश्व किरणें तथा अणुशक्ति आघातों के कारण चंद्रमा में अनेक खड्ड बन जाने की बात कही।

जेम्स जीव्स और डा० वफुन्स का मत है कि कभी कोई विशाल तारा सूर्य के समीप होकर गुजरा। उसके और सूर्य के गुरुत्वाकर्षणों में रस्साकशी हुई। इस संघर्ष में सूर्य का एक बड़ा भाग महा भयंकर विस्फोट के साथ टूट गया। उस टूटे भाग से सौर-मंडल के अन्य ग्रह बने और उसी मलवे में से चंद्रमा बन गया। चंद्रमा पृथ्वी के समीप होने के कारण धरती के गुरुत्वाकर्षण में जकड़ गया और उसी की परिक्रमा करने लगा।

डा० फेड हायल का कथन है—"अनंत आकाश में प्रचंड ज्योति के फेंके हुए कणों को सूर्याकर्षण ने खींचा और वह धूलि, सघन होकर चंद्रमा बन गई।"

अब चंद्रमा के संबंध में ये नए तथ्य स्वीकार कर लिए गए। प्राचीन मान्यताओं की साहित्य में चर्चा भले ही होती रहे, पर उन्हीं को सही मानने के लिए कोई आग्रह नहीं करता। यही उचित भी है।

यूनान का खगोलवेत्ता अनेग्जागोरस बड़े दावे के साथ कहता था कि सूर्य का विस्तार इतना है, जितना यूनान का दक्षिण भाग। उन दिनों यह प्रतिपादन पूरी तरह गुप्त माना गया था। जरा-सा सूरज भला कहीं यूनान के दक्षिण भाग जितना बड़ा हो सकता है?

पीछे दूसरे खगोलवेत्ता और भी आगे बढ़े। उन्होंने हिसाब लगाकर बताया कि सूर्य का विस्तार पृथ्वी से भी बड़ा है। सुनने वालों ने इसे और भी बड़ी अतिशयोक्ति माना। यह ग्रह गणित आगे भी जारी रहा और ज्योतिर्विद पोसिडोनियस ने सूर्य का विस्तार

और भी बड़ा बताया। उसका प्रतिपादन वर्तमान मान्यता से लगभग आधा था।

मध्यकाल में ब्रह्मांड की सुविकसित कल्पना करने वाला पुराना दैवज्ञ 'दांते' है। उसने अपनी पुस्तक 'पैराडाइसो' में कहा है—सूर्य, चंद्र, स्वर्ग, स्थिर नक्षत्र इन सबका एक केंद्र मंडल है। चौबीस घंटे में उसका एक चक्कर पूरा होता है। आज की ब्रह्मांड मान्यता की तुलना में उसे बचपन की कल्पना ही कहा जा सकता है।

अब ब्रह्मांड के विस्तार की मान्यता पुरातन की अपेक्षा बहुत आगे और बहुत विस्तृत है। तारे आसमान की छत में लटके हुए अब झाड़-फानूस नहीं रहे। वर्तमान खगोलविद्या के अनुसार सबसे निकट दीखने वाला तारा भी सूर्य से बहुत बड़ा और बहुत दूर है। सूर्य का प्रकाश पृथ्वी तक आठ मिनट में आ जाता है, पर उस निकटवर्ती तारे का प्रकाश हम तक आने में लगभग चार साल लगते हैं। खुली आँखों से जितने तारे हमें दीखते हैं, वे सब अपनी आकाश गंगा 'मंदाकिनी' के ही अंडे-बच्चे हैं और उसी से बँधे हैं, उसी की गोद में खेलते हैं। हमारी मंदाकिनी आकाश गंगा की तरह ब्रह्मांड में करोड़ों आकाश गंगाएँ हैं। अपनी आकाश गंगा में लगभग ३ अरब तारे हैं। इनमें निकटवर्ती नक्षत्र की दूरी २०० खरब मील है। ऐसी-ऐसी आकाश गंगाएँ करोड़ों हैं और वे एकदूसरे से इतनी दूर हैं कि एक का प्रकाश दूसरी तक पहुँचने में २ करोड़ वर्ष लगते हैं।

सूर्य का वजन २ अरब टन है। अपनी आकाश गंगा अपने सूर्य से ६० अरब गुनी भारी है। ऐसी-ऐसी करोड़ों आकाश गंगाओं के तारा मण्डल ने जो जगह घेर रखी है, उसे सिर में एक बाल के बराबर ही समझना चाहिए। शेष ब्रह्मांड तो बिलकुल पोला, सूना, खाली, नीरव ही पड़ा हुआ है।

अपना सूर्य, मंदाकिनी आकाश गंगा का एक छोटा-सा तारा है। ऐसे लगभग १ खरब तारे उसमें गुँथे हुए हैं और अपने सूर्य की

तुलना में ६० हजार गुने तक बड़े हैं। इनकी दूरी का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि यदि कोई प्रकाश की गति से, एक सेकंड में १,८६,००० मील की चाल से चले, तो उसे अपनी आकाश गंगा में सबसे निकटतम तारे पर पहुँचने के लिए प्रकाश गति से ४ वर्ष लगेंगे और दूर वाले पहुँचने के लिए ८० हजार वर्ष चलना पड़ेगा। ऐसी-ऐसी असंख्य आकाश गंगाएँ इस अनंत ब्रह्मांड उसकी परिधि और सीमा की कल्पना कर सकना भी मानवी बुद्धि से बाहर की बात है।

कोई समय था जब समझा जाता था कि सृष्टि का केंद्र यह पृथ्वी ही है। यह स्थिर है और सूर्य, चंद्र तथा तारे इसके आस-पास घूमते हैं। तब धरती को चौकोर या चपटी समझा जाता था। कुछ इसे स्वर्गादपि गरीयसी मानते रहे, कुछ ने माना उसे जन्म-मरण के कुचक्र में बाँधने वाला भवसागर।

दार्शनिक फिरदौसी ने उसे असीम सौंदर्य की देवी कहा और बताया कि यदि स्वर्ग कहीं है, तो धरती पर ही है।

वैज्ञानिक भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि यह धरती अन्य नक्षत्रों की तुलना में अत्यधिक सौभाग्यशाली है। इसकी सूर्य से दूरी तथा कला इतनी उपयुक्त है कि उससे प्राणियों का जन्म, ऋतु अनुकूलता तथा अगणित शोभा, सुविधा का सृजन संभव हो सका। यह स्थिति अन्य ग्रह-नक्षत्रों की नहीं है। उनका तापमान, शीतमान इतना भयंकर है कि जीवन की संभावना का कोई लक्षण नहीं दीखता। चूँकि हम इस धरती पर रहते हैं और निकटवर्ती वस्तु की शोभा, उपयोगिता न दीख पड़ती है और न समझ में आती है। उसे देखने-समझने के लिए दूरी का अंतर होना चाहिए। अपोलो ११ अंतरिक्ष यान के यात्रियों ने दूर से इस धरती की शोभा को देखा, तो वे गद्‌गद हो उठे। उन्होंने उस सौंदर्य की अभिव्यक्ति को अनिर्वचनीय और अकल्पनीय बताया।

अब पृथ्वी भूतकाल के ज्योतिषियों की मान्यता के अनुरूप स्थिर नहीं है। वह एक नहीं कई चाल चलती है। पृथ्वी की कुछ चालें पहले से ही विदित थीं। पृथ्वी सूर्यमंडल की परिक्रमा एक वर्ष में पूरी करती है। वह अपने धुरी पर २४ घंटे में घूम लेती है। सूर्य पृथ्वी समेत अपने सौरमंडल को साथ लिए महासूर्य की परिक्रमा के लिए दौड़ा जा रहा है। इनके अतिरिक्त पृथ्वी की एक और गति का पता चला है, जिसे 'थिरकन' कह सकते हैं।

ऋग्वेद की एक ऋचा है—**'इह ब्रवीत य उतच्चिकेतत्'** अर्थात इस विश्व के सब रहस्यों को यदि कोई जानता है, तो वह यहाँ आकर बताए।

तैत्तिरीय ब्राह्मण की एक श्रुति है—यह विश्व किससे उत्पन्न हुआ, यह कौन जानता है? इसके रहस्यों को कौन कह सकता है? देवता भी तो पीछे जन्मे हैं, वे अपने उद्‌भव से पूर्वकाल का वृत्तांत कैसे जान पाए? जिसका एक फल यह पृथ्वी है, उस ब्रह्मांड वृक्ष का जन्म किस आरण्यक में हुआ, इसे कौन जानता है? इस सबका जो अधिष्ठाता है, उसे कौन जानता है? वह अधिष्ठाता भी अपने विस्तार का संपूर्ण रहस्य जानता है या नहीं इसे कौन जाने?

कापर्निकस भी सत्य की शोध में एक सीमा तक ही बढ़ सका। उसने पृथ्वी को विश्व का केंद्र तो नहीं माना, पर वह सेहरा सूर्य के सिर बाँध दिया। वह कहता था—ब्रह्मांड का मध्य केंद्र सूर्य है। उसी के इर्द-गिर्द समस्त ग्रह-नक्षत्र परिक्रमा करते हैं। उसे क्या पता था कि बेचारा सूर्य भी कभी अनंत ब्रह्मांड की परिभ्रमण प्रक्रिया का एक नन्हा-सा बाल-पथिक ही माना जाने लगेगा।

प्राचीन ज्योतिषशास्त्र की मान्यता यही रही है कि पृथ्वी स्थिर है और सूर्य चल एवं ग्रह-नक्षत्र उसकी परिक्रमा करते हैं। पृथ्वी को चपटी तश्तरीनुमा माना जाता था। यों पीछे पाइथागोरस, अलवेरुनी,

आर्यभट्ट आदि ने पृथ्वी को गोल तो माना, पर उसे भ्रमणशील वे भी नहीं मानते थे।

पहली बार पृथ्वी के भ्रमणशील होने का प्रतिपादन पोलेंड निवासी कापर्निकस ने किया और इसके प्रमाण तर्क का प्रतिपादन उसने अपने ग्रंथ 'आकाश मंडल में भ्रमण-पथ पर' नामक ग्रंथ में किया। उसे अनुमान था कि इस प्रतिपादन से पुरातनपंथी ईसाई समाज उसका घोर विरोध करेगा, इसलिए उसने चतुरता से काम लिया, उसे रोम के पोप पाल तृतीय को समर्पित किया और ऊपर से ऐसी लीपा-पोती की कि प्राचीन प्रतिपादन का खंडन होते हुए भी कटुता उत्पन्न नहीं हुई। पोप की आड़ में कुछ दिन तो यह चाल सफल रही, पर पीछे जैसे ही उसे लोगों ने बारीकी से पढ़ा वैसे ही ईसाई धर्म के दोनों ही वर्ग प्रोटेस्टेंट और रोमन कैथोलिक उसके विरोध में हाथ धोकर पीछे पड़ गए। अंततः पोप के आदेश से उस पुस्तक को जब्त कर लिया गया। प्रतिपादनकर्त्ता पर वे अपराध लगाए गए, जिनका फल उसे मृत्यु दंड ही भुगतना पड़ सकता था। अच्छा इतना ही हुआ कि अपराध लगाए जाने से ७३ वर्ष पूर्व ही कापर्निकस मर चुका था, अन्यथा उसे भी धरती को भ्रमणशील बताने वाले एक अन्य खगोलज्ञ बूनी की तरह जीवित जला दिया जा सकता था। ऐसे ही प्रतिपादनों पर गैलीलियो को भारी उत्पीड़न सहने पड़े थे।

गैलीलियो ने खगोल का दूरदर्शन कर सकने योग्य दुरबीन सबसे पहले १६०९ में बनाई। इससे पूर्व जितना तारामंडल आँखों से देखा जा सकता था, उसी की खोज संभव थी और की गई। आचार्य लगध, आर्यभट्ट, वराहमिहिर, भास्कराचार्य और टालमी, कोपर्निकस, केपलर आदि ज्योतिर्विदों ने आँखों से जो देखा जा सकता था, उसी आधार पर खगोल विद्या की खोज-बीन की।

पृथ्वी का अक्ष और उसके सिरे अपने स्थान में फेर-

बदल करते रहते हैं। १४ मास में यह विचलन ७२ फीट तक होता रहता है।

पिछली शताब्दियों के खगोलवेत्ता जेम्स ब्रांडले और मौलीनो ने यह आशंका व्यक्त की थी कि ध्रुव अपना स्थान बदलते हैं, उसका कारण पृथ्वी की एक गति 'थिरकन' भी हो सकती है।

ऐसा क्यों होता है, इसके कारणों की खोज करते हुए कई तथ्य सामने आए हैं। अक्ष की विस्थापना, ध्रुव प्रदेशों में बरफ का पिघलना समुद्रों की विशाल जलराशि का भटकाव, भूगर्भ के तप्त लावे का उद्वेलन और पुनर्वितरण जैसे कारण इस थिरकन के सोचे गए हैं।

तथ्यों का सही निरूपण करने के लिए इंटरनेशनल पोलर मोशन सर्विस अंतरराष्ट्रीय ध्रुव चलन सेवा की ओर से उत्तरी ध्रुव के चारों और ४० डिगरी अक्षांश पर पाँच वेधशालाएँ स्थापित की गई हैं और उनमें व्यवस्थित रूप से शोध कार्य हो रहा है। ये वेधशालाएँ (१) विजुसावा (जापान) में, (२) समरकंद के निकट 'केताब' में, (३) इटली के निकट सार्डीनिया के कार्लोफोर्ते में (४) अमेरिका के गैदर्जवर्ग तथा (५) युक्रिया स्थानों में कार्य संलग्न हैं। रात्रि के छह घंटे आकाश निरीक्षण के आधार पर इनमें कार्य होता है और निष्कर्ष विजुसावा केंद्र में भेज दिया जाता है। इन सभी वेधशालाओं के यंत्रों की संवेदनशीलता में कोई दोष उत्पन्न न होने देने के लिए वहाँ का तापमान न बढ़ने देने की कठोर व्यवस्था है। रात्रि में अति मंद रोशनी, सर्दियों में हीटर तक न जलाना, खिड़कियाँ खुली छोड़ना, कार्यकर्त्ताओं की शारीरिक गरमी तक बाहर न आने देने जैसी अनेक सावधानियाँ बरती जाती हैं।

आकाश भी गहन गंभीर

आकाश यों एक और अनंत है। ऊँचाई के अनुपात से उसकी स्थिति में जो अंतर पड़ता जाता है, उसे ध्यान में रखते हुए गणनाकर्त्ताओं ने उसका भी परतों के हिसाब से विभाजन कर दिया है।

पृथ्वी के धरातल से लगभग १००० मील ऊँचाई तक भारी-हलकी हवा का अस्तित्व है। इस ऊँचाई को चार भागों मे विभक्त किया गया है।

(१) ट्रोपोस्फीयर (क्षोभमंडल)—यह समुद्र सतह से ३५ हजार फुट तक है। समस्त वायु का लगभग तीन-चौथाई वजन इसी क्षेत्र में है। हमारे जीवनोपयोगी तत्त्व का अधिकांश भाग इसी क्षेत्र में भरा पड़ा है। आसानी से साँस ले सकना २० हजार फुट तक ही संभव है। इससे ऊपर उठना हो, तो ऑक्सीजन का मास्क चेहरे पर बाँधकर ही उड़ सकते हैं। इस ऊँचाई पर बरफानी हवाएँ चलती हैं, जिनसे मुँह और कान के अवयव तक काँपने लगते हैं और बोलना ही नहीं सुनना भी कठिन हो जाता है। बोलने, सुनने की कठिनाई तो इससे ऊपर उठने पर भी बनी ही रहती है। ऊपर क्रमशः हवा पतली होती जाती है, जिसमें मुँह के लिए ध्वनि-कंपनों को छोड़ सकना कठिन है। बोलने का प्रयत्न करने पर मुँह से सिर्फ 'गों-गों' सरीखी कुछ ऐसी आवाज निकलेगी, जिसे कोई-कोई जीव-जंतु बोलते हैं।

(२) स्ट्रेटोस्फीयर (समताप मंडल)—क्षोभमंडल की ३५ हजार फुट की ऊँचाई पार करने के उपरांत स्ट्रेटोस्फीयर का क्षेत्र आरंभ होता है, जो धरती से ६५ मील की ऊँचाई तक चला जाता है। ४५ हजार फुट से ऊपर खुला शरीर नहीं जा सकता। इसके लिए एयरकंडीशन जेट या बी-३६ किस्म का वायुयान चाहिए। यदि वहाँ कोई प्राणी खुला घूमे तो हवा का दबाव कम होने से उसकी नसें फट जाएँगी। मस्तिष्क विक्षिप्त हो जाएगा। इस परिधि में ऐसे आवरण ओढ़ना आवश्यक है, जिनके कारण वायु का उतना ही दबाव बना रहे, जितने का कि शरीर अभ्यस्त है। इस क्षेत्र की वायु शून्य से नीचे ६७ डिगरी ठंढी होती है, जिसे बिना सुरक्षा आवरण के सहन नहीं किया जा सकता। समुद्र की गहरी सतह में रहने वाले जल-जंतुओं को यदि ऊपर ले जाया जाए, तो जल का दबाव कम हो जाने से वे

गुब्बारे की तरह फट जाएँगे। उपरोक्त ऊँचाई पर कोई प्राणी यदि बिना आवरण होगा, तो स्वभावत: वह भी गुब्बारे की तरह फटकर आकाश में छितरा जाएगा।

१९ हजार मील की ऊँचाई पर ब्रह्मांड किरणों की वर्षा शुरू हो जाती है। वे सूर्य से निकलकर अन्य ग्रहों की तरह अपनी पृथ्वी पर भी बरसती हैं। वे इतनी घातक होती हैं कि देखते-देखते मृत्यु उपस्थित कर दें। अच्छाई यही है कि धरती तक पहुँच ही नहीं पातीं, ऊपर आकाश में अवरुद्ध हो जाती हैं, इससे ऊपर का आकाश ही उन्हें रोक लेता है। इस परत पर तो वह छिट-पुट बूँदा-बाँदी ही कर पाती हैं।

(३) ओजोनोस्फीयर (ओजोन मंडल)—यह पृथ्वी से २०-२५ मील ऊँचाई पर है। यह विचित्र है। नीचे वाले आकाश की शून्य से ६७ डिगरी नीचे की ठंढ अचानक १७० डिगरी फारेनहाइट गरमी में परिवर्तित हो जाती है। यहाँ गाढ़ी आक्सीजन है, जो सूर्य द्वारा फेंकी गई ब्रह्मांड किरणों और अल्ट्रावायलेट किरणों को रोककर अपने में आत्मसात कर लेती है। इसी किरणें सोखने की क्रिया के कारण ऑक्सीजन इतनी गरम हो जाती है। चालीस मील ऊपर जाने पर कभी रात नहीं होती है।

(४) ऐक्सोस्फियर—यह अंतिम आकाश अत्यंत भयावह है। यहाँ घोर अंधकार छाया रहता है। रंग-बिरंगी रोशनियों के तूफान उठते रहते हैं। कुछ दूरी तो शून्य से २८ डिगरी नीचे तक की ठंढ रहती है, पीछे अकल्पनीय गरमी बढ़ जाती है। पानी खौलने की गरमी २१२ डिगरी फारेनहाइट होती है, पर यहाँ तो वह अंक ४००० डिगरी पर जा पहुँचा है। यह गरमी कल्पनाशक्ति से बाहर की है। पृथ्वी के अयन मंडल की ऊपरी परत से सूर्य की ब्रह्मांड किरणों और अल्ट्रवाइलेट किरणों का घोर संघर्ष होता है। वे नीचे उतरना चाहती हैं। वायु की परत उन्हें रोकती है।

इस परत की वायु इतनी पतली होती है कि तोप छोड़ने की आवाज भी निकटवर्ती को सुनाई न पड़ेगी। इसी क्षेत्र में उल्काओं की वर्षा भी होती है कि आकाश के ऊँचे स्तर पर हवा हलकी और पतली पड़ती जाती है, साथ ही सूर्य एवं अन्य ग्रहों का वह प्रभाव अधिक स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है, जो भूतल पर प्रायः बहुत ही कम मात्रा में आ पाता है। उसे तो मध्यवर्ती आच्छादन ही बीच में रोक लेते हैं। यह तो पृथ्वी का आकाश हुआ। वैज्ञानिकों के अनुसार सारा ब्रह्मांड ही आकाश में शून्य में अवस्थित है।

इस ब्रह्मांड की रचना इस प्रकार हुई है कि उसकी पोल में हर वस्तु अधर लटकी रहती है। गिरने की बात तो तब बनती है, जब उस पर कोई दबाव पड़ता है और बलपूर्वक अपनी ओर खींचता है। यदि दबाव न पड़े, तो वह पोले आकाश में अपनी जगह अनंत काल तक बनी रहेगी।

पृथ्वी में आकर्षण शक्ति है, इसलिए वह अपने प्रभाव-क्षेत्र में दूसरी वस्तुओं को अपनी ओर खींचती है। इसी खिंचाव से प्रेरित होकर चीजें ऊपर से नीचे गिरती हैं। वजन क्या है? वजन उस शक्ति का नाम है, जो अमुक वस्तु को पृथ्वी की ओर खींचने से रोकने के लिए लगानी पड़ती है। दूसरे शब्दों में पदार्थ पर पड़ने वाले पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के दबाव को वजन कह सकते हैं।

यह दबाव सदा-सर्वदा एकसा नहीं होता। परिस्थितियों के अनुसार यह घटता-बढ़ता रहता है। अस्तु, चीजों का वजन भी घट-बढ़ जाता है। एक पदार्थ खुली जगह में जितना भारी होगा, उतना पानी में डुबोकर तौलने पर न रहेगा, क्योंकि पानी आकर्षण शक्ति के प्रभाव को कम करता है। अस्तु, पदार्थ भी तौल में हलका होगा। आकर्षण शक्ति पृथ्वी की सतह पर पूरे जोर पर होती है और जितने ऊपर उठते जाएँ, उतनी कम होती जाती है। जमीन पर वस्तु का जितना वजन होता है, उतना बहुत ऊँचे पर्वत शिखर पर

पहुँचने से नहीं रहता और ऊपर आकाश में उड़ें तो वजन और भी अधिक घटेगा।

हाँ इस तौल-नाप में एक बात ध्यान में रखनी होगी कि तराजू और बाँट इस प्रकार के बने हों कि उन पर पृथ्वी की आकर्षण शक्ति का दबाव न पड़े, अन्यथा वजन ज्यों-का-त्यों ही बना रहेगा।

उसे कहीं गिरना न पड़े, गिरावट का कारण उत्पन्न आकर्षण है, जिन्हें विभिन्न नाम दिए गए हैं। जब यह आकर्षण इंद्रियों को प्रभावित करता है, तब उसे वासना कहते हैं। मन को प्रभावित करता है, तब उसी का नाम तृष्णा बन जाता है। जब उसका उद्‌गम धन होता है, तो लोभ कहते हैं और जब व्यक्ति में खिंचाव आता है, तो उसे मोह कहते हैं। वस्तुत: वे सभी आकर्षण एक ही स्तर के हैं। चीजें हमें अपनी ओर खींचती हैं। जितनी गति से हम उसमें प्रभावित होते और खिंचते हैं, उसी का नाम गिरावट या पतन है। यह पतन कितना हो रहा है और उसे रोकने के लिए कितनी शक्ति लगानी पड़ेगी, इसे जुटा लिया जाए, तो हमारा वजन नापा जा सकता है।

नीचे रहने पर भार बढ़ने और ऊँचे उठने पर उसके हलका होने की स्थिति को ऐसी तराजू पर नापा जा सकता है, जो स्वयं दबाव मुक्त है। वस्तुत: इस विशाल ब्रह्मांड में कोई दिशा है नहीं। हर वस्तु जहाँ है, वहाँ बनी रह सकती है। चंद्रमा हमें ऊपर लगता है और चंद्रमा पर जाने से प्रतीत होता है कि पृथ्वी आसमान में उठी हुई है। यही बात अन्य ग्रह-नक्षत्रों के बारे में है। यदि हम उनमें से किसी पर जा पहुँचेगे, तो देखेंगे कि अपना लोक नीचा है और पृथ्वी ऊपर आकाश में उसकी तरह जगमगा रही है, जैसे कि हम किसी तारे को देखते हैं। आकर्षण शक्ति के खिंचाव से खिंचने का नाम ही गिरना है, गिरने की दिशा नीचे मानी जाती है।

हम मंगल ग्रह की ओर उड़ें, तो जब तक पृथ्वी की आकर्षण शक्ति से लड़ते हुए आगे चलेंगे, तब तक सोचेंगे कि ऊपर उठ रहे हैं। जब मंगल की आकर्षण शक्ति के क्षेत्र में प्रवेश करेंगे, तो प्रतीत होगा कि गिरना आरंभ हो गया। खिंचाव का दबाव जितना बढ़ता जाएगा, उसी अनुपात से गिरने की गति बढ़ती जाएगी। इस तथ्य पर विचार करते हुए इस निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि पतन और कुछ नहीं, नीचता और कहीं नहीं—इसी आधार पर निर्भर है कि हम आकर्षणों से किस कदर प्रभावित होते हैं, इनसे मुक्त रहकर ही यह संभव है कि अपनी मूल स्थिति में बने रहा जाए, अपनी यथार्थ सत्ता में टिका रहा जाए।

मानवीय सत्ता अनंत आकाश की तरह सुविस्तृत है। उसके ऊँचे परत क्रमशः धूल, धुंध और सघन भारीपन से युक्त होते जाते हैं और अंततः वह स्तर आ जाता है, जिसमें ब्रह्म के प्रकाश और प्रभाव को अधिक स्पष्टतापूर्वक देखा-समझा जा सके। इस तथ्य को स्वीकार किया या समझा जाए अथवा नहीं। सचाई तो यही है और उसे देखे, जाने, समझे व स्वीकारे बिना आगे बढ़ने, ऊँचा उठने का अन्य कोई उपाय नहीं है।

जन्म-मरण और विकास का सर्वव्यापी चक्र

प्रकृति की मधुर-कटुक, सुंदर-कुरूप, सुखद-दुःखद क्रिया-प्रक्रिया की विचित्रता ऐसी है, जिसे देखकर सहज ही समझ सकना कठिन पड़ता है। यह सब क्यों और किस उद्देश्य के लिए हो रहा है? छोटे बच्चे रेत से घर और बालू का महल बनाते हैं, टहनियाँ गाड़कर बगीचा लगाते और उचंग उठने पर बात-की-बात में उस संरचना को पैर से ठुकराते और तोड़-फोड़कर बरबाद करते देखे जाते हैं। इन परस्पर विरोधी सृजन और विनाश की गतिविधियों में समान रूप से उत्साह प्रकट करने वाले बाल-स्वभाव का क्या निष्कर्ष निकाला जाए? क्या विवेचन किया जाए? कारण ढूँढ़ न पाने पर भी तथ्य तो यथावत ही बने रहते हैं। बालबुद्धि के साथ जुड़ी हुई यह विचित्र विसंगति बड़ों पर भी यदा-कदा अपना प्रभाव छोड़ती है। वे भी सृजन और तोड़-फोड़ की परस्पर विरोधी प्रकृतियों का परिचय देते रहे हैं। आज की मित्रता कल शत्रुता में परिणत होती देखी जाती है। किसान को एक समय पौधे उगाने और उन्हीं को दूसरे समय काट-कूटकर चूरा बना देने की चित्र-विचित्र क्रियाओं के बीच संगति कैसे मिले?

लगता है कि पुरातन को नवीनता में बदलने के लिए एक गतिचक्र, एक सुनिश्चित विधि-विधान के साथ चल रहा है। अभिवृद्धि एक सीमा तक ही प्रौढ़ता बनाए रह सकती है। परिपक्वता के साथ जीर्णता बढ़ती है, ताकि आरंभ और अंत का—अंत और आरंभ का गतिचक्र अपनी गोलाई एवं धुरी पर अनवरत रूप से अग्रगामी बना रह सके।

जन्म को न तो आदि समझा जाना चाहिए और न मरण को अंत। चक्र में आदि-अंत कहाँ है, इसकी कल्पना भर की जा सकती है। तथ्यत: गोलाई में आदि-अंत कहीं होता ही नहीं। जीवन का अंत मरण समझा जाता है; परंतु वह तो ऐसा विश्रामस्थल है, जहाँ से जीव पुन: नया जीवन धारण करता है और कर्मक्षेत्र-संसार में पुन: नए उत्साह के साथ प्रवेश करता है।

पृथ्वी पर प्रकृति की विकास व विनाश लीलाओं का क्रम अनवरत रूप से चलता रहता है। पृथ्वी अपने इर्द-गिर्द वायुमंडल का एक कवच पहने हुए है। उसके तीन आवरण हैं। प्रत्येक से पृथ्वी को, इसके प्राणियों को तथा पदार्थों को बहुत कुछ मिलता है, किंतु यह भी एक कटु सत्य है कि उसी के कारण अपनी दुनिया को विनाश का कष्ट भी कम नहीं भुगतना पड़ता।

हम सभी मनुष्य वातावरण के अदृश्य सागर के तले निवास करते हैं। प्राय: ९९ प्रतिशत वातावरण का भार ५ अरब टन है और वह सिर्फ ऊपर के ३० मील के क्षेत्र में सिमटा हुआ है। इस सघनता का लाभ यह है कि वह अंतरिक्षीय किरणों, उल्कापातों आदि घातक प्रभावों से पृथ्वी के जीवन की रक्षा करता है। साथ ही प्राणवायु जल रसायन आदि देता है। तापमान को नियंत्रित रखता है। इस तरह यह घनीभूत वातावरण अपनी पृथ्वी के लिए, हम सब प्राणियों के लिए एक रक्षा कवच का काम करता है।

इस वातावरण में तनिक-सी भी उथल-पुथल पृथ्वीतल पर भयंकर चक्रवातों, प्रलयंकर तूफानों और विक्षुब्ध विनाश लीला का कारण बनती है। सागर की विशाल जलराशि भी निरंतर उफनती रहती है, धरती के ऊपर का वातावरण भी सदा धधकता रहता है। अभी तक ऐसा कोई यंत्र नहीं बन पाया है, जो वातावरण की गहराई नाप सके और तथ्यों का सही एवं समग्र पता लगा सके। धरती की

छाती में तो विशाल ज्वालामुखियों का अविराम हाहाकार दबा ही रहता है।

भीतर चल रही उथल-पुथल कभी-कभी आकस्मिक विस्फोटों के रूप में अभिव्यक्त होती है। यद्यपि कोई भी विस्फोट वस्तुतः आकस्मिक नहीं होता। वह एक क्रमिक प्रक्रिया की ही अनिवार्य परिणति होता है।

सृष्टि के आरंभ से ही प्राकृतिक परिवर्तन होते रहते हैं। मानव जाति के इतिहास में ऐसे तीव्र परिवर्तन से सदा नए मोड़ आते हैं।

इस परिवर्तन के स्वरूप बहुत तरह के होते हैं। सौरमंडल की गतिविधियों की एक, दूसरे ग्रह पर भी पारस्परिक प्रतिक्रिया होती है व प्रभाव पड़ता है। ज्वालामुखियों के विस्फोट, तूफान, भूकंप, ऊपरी वातावरण, विषमता से उत्पन्न हलचलें अथवा सौरमंडल की कोई भी असामान्य गतिविधि ऐसे तीव्र परिवर्तनों का कारण बन जाती है। अंतरिक्ष में आवारागर्दी करने वाली कुछ उल्काएँ भी अपनी दुस्साहसिकता के कारण स्वयं को तो क्षति पहुँचाती ही हैं, पृथ्वी आदि अन्य ग्रहों को भी उथल-पुथल से भर देती हैं। इन उद्दंड उल्काओं की आवारागर्दी की गाथाएँ दुनिया भर के पौराणिक साहित्य में रोचक ढंग से वर्णित हैं।

यूनान की पौराणिक गाथाओं में 'इकोरस' नामक एक युवक की कथा है। यह सूर्य से मिलने की महत्त्वाकांक्षा रख, नकली पंख लगाकर चल पड़ा। पंख उसने मोम से चिपका लिए थे। अधिक ऊँचे जाने पर पंख को जोड़ने वाली मोम गरमी के कारण पिघल गई और पंख नीचे गिर पड़े। इकोरस भी औंधे मुँह नीचे समुद्र में जा गिरा तथा मर गया।

पिछले दिनों इसी युवक की तरह एक दुस्साहसी उल्का पिंड भी देखा गया। इसका नाम भी 'इकोरस' ही रखा गया। यह 'इकोरस' उल्का पिंड कभी सूर्य के इतना अधिक निकट जा पहुँचा

कि बस थोड़ा और पास जाए, तो भुर्ता ही बन जाए। कभी लगता, वह बुध से, कभी मंगल और कभी शुक्र से अब टकराया, तब टकराया। सूर्य के अति निकट पहुँचकर वह आग का गोला ही बन जाता, तो कभी सूर्य से इतनी दूर जा पहुँचता कि शीत की अति ही हो जाती। जून १९६८ में इस उद्दंड क्षुद्रग्रह की पृथ्वी के ध्रुव प्रदेश से टकराने की संभावना बढ़ गई थी। यदि खगोलशास्त्रियों की यह आशंका सत्य सिद्ध होती, तो पृथ्वी में भीषण हिम तूफान आते, समुद्र उफनकर दुनिया का थल-भाग अपनी चपेट में ले लेता, साथ ही लाखों वर्ग मील भूमि में गहरा गड्ढा हो जाने की संभावना थी। जहाँ यह उफनता समुद्री जल भर जाता वहाँ कुल मिलाकर करोड़ों मनुष्यों का सफाया हो जाता। सन् १९०८ में मात्र हजार फुट व्यास की एक उल्का साइबेरिया के जंगल में गिरी थी, तो वहाँ अणु बम विस्फोट जैसे दृश्य उपस्थित हो गए थे। इकोरस तो उस उल्का से हजारों गुना बड़ा था। अत: परिणाम का अनुमान किया जा सकता है। सौभाग्यवश इकोरस पृथ्वी के समीप होकर गुजर गया और एक भीषण दुर्घटना टल गई। सौरमंडल में ऐसे अनेक क्षुद्रग्रह—हिडालगो, इरोस, अलवर्ट, अलिंडा एयोर सहसा टकराकर कभी भी धरती के जीवन में उथल-पुथल मचा सकते हैं।

वैज्ञानिकों ने अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला कि सूर्य पर जो हर ११वें वर्ष कुछ धब्बे से बन जाते हैं, उनका कारण सौरमंडल के ग्रहों की गतिविधियाँ ही हैं। स्पष्ट है कि सौरमंडलीय ग्रहों की प्रत्येक गतिविधि का सूर्य पर प्रभाव पड़ता है, जिस तरह सूर्य की हर गतिविधि से सौरमंडलीय ग्रह प्रभावित होते हैं। सभी ग्रह पश्चिम से पूर्व की ओर सूर्य की परिक्रमा करते हैं और पृथ्वी की ही भाँति अपनी धुरी पर भी घूमते हैं। इस परिभ्रमण काल में जो अगणित प्रकार की उथल-पुथल होती है, उनसे पृथ्वी सहित सभी ग्रह-उपग्रह प्रभावित होते हैं।

ऐसी उथल-पुथल की स्मृतियाँ मानवीय इतिहास में सुरक्षित हैं। पुराण कथाओं में इनका रोचक वर्णन मिलता है। मात्र क्षुद्र नक्षत्रों से टकराने अथवा सूर्य या किसी बड़े नक्षत्र में व्यापक परिवर्तन होने के कारण उथल-पुथल मचने से ही धरती में जलप्लावन आदि की घटनाएँ नहीं घटतीं, बल्कि धरती के भीतर भी जल प्रलय आदि के दृश्य उपस्थित करती हैं।

सभी जानते हैं कि कभी भूमंडल के सभी महाद्वीप एकदूसरे से जुड़े थे। ग्रहों की हलचलों और आकुंचन प्रसारण की प्रक्रियाओं से वे एकदूसरे से दूर हटते गए। हिमालय अभी भी लगातार उत्तर की ओर खिसक रहा है और भू-वैज्ञानिकों का कथन है कि ५ करोड़ वर्ष बाद संपूर्ण उत्तरी भारत का अधिकांश इलाका हिमालय के पेट में समा जाएगा। इसी तरह सन् १९६६ में मास्को में संपन्न द्वितीय अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक सम्मेलन में प्रो० डॉ० ब्रूस सी० हीजेन और डा० नील यू० डाइक ने घोषणा की थी कि आज से लगभग २ हजार ३२ वर्ष बाद पृथ्वी के चुंबकीय बल-क्षेत्र अपना स्थान बदल देंगे। साथ ही पृथ्वी की चुंबकीय शक्ति घटेगी। इसमें मनुष्यों का आकार व जीवन भी प्रभावित होगा। वृक्ष-वनस्पति, कीट-पतंग आदि पर भी व्यापक प्रभाव पड़ेगा। प्रशांत महासागर की तलहटी से निकाली गई मिट्टी और रेडियो सक्रियता एवं 'लारिया' नामक एककोशीय जीव में हो रहे क्रमिक परिवर्तन से पता चलता है कि सन् ४००० तक चुंबकीय क्षेत्र में परिवर्तन होगा, जिसमें ध्रुवों का स्थान भी परिवर्तित होगा। परिणामस्वरूप धरती में खंडप्रलय की स्थिति हो जाएगी। बरफीले तूफान चारों ओर उठेंगे। धरती में बेहद गरमी और बेहद ठंढक की स्थितियाँ पैदा हुआ करेंगी। समुद्र तल भी लगातार ऊपर उठ रहा है। इसका भी परिणाम अवश्यंभावी है। ऐसी ही विशिष्ट प्राकृतिक उथल-पुथल अतीत में भी जलप्रलय जैसी घटनाओं का कारण बनती रही हैं।

विश्व की अधिकांश प्राचीन सभ्यताओं के साहित्य में जलप्लावन तथा उसके बाद सृष्टि के नवीन क्रम का वर्णन मिलता है। इसे धार्मिक पुट दिया गया है, लेकिन भूगर्भशास्त्रियों का भी अनुमान है कि समय-समय पर पृथ्वी के विशेष खंड टूट जाते हैं और धरती पर जल ही जल हो जाता था।

भूगर्भवेत्ता डॉ० ट्रिकलर के अनुसार हिमालय के आस-पास प्राप्त ध्वंसावशेषों से ज्ञात होता है कि जल प्रलय की घटना सत्य है।

यूनानी साहित्य में भी जलप्लावन की चर्चा है। एक कथा के अनुसार 'अटिका' जलमय हो गई थी। दूसरी कथा के अनुसार 'जीयस' ने अपने पिता की इच्छापूर्ति के लिए 'ड्यूकालियन' का विनाश करना चाहा। जब ड्यूकालियन अपनी पत्नी पैरहा के साथ जलयात्रा कर रहा था, जीयस ने भीषण जलवृष्टि द्वारा पृथ्वी को डुबा दिया। नौ दिन तक ड्यूकालियन और पैरहा पानी में ही अपनी नाव द्वारा तैरते रहे। जब वे 'पैरासन' पहुँचे, तो जलप्लावन कुछ कम हुआ। तब उन दोनों ने अपने अंगरक्षक की देवताओं को बलि दे दी। इससे जीयस प्रसन्न हो गया और उनको संतान का वरदान दिया। ड्यूकालियन और पैरहा ने वरदान पाकर जीयस पर पत्थरों की वर्षा की। जो पत्थर ड्यूकालियन ने फेंके वे पुरुष हो गए और जो पैरहा ने फेंके वे नारी हो गए।

बेबोलोनिया में भी ऐसी ही एक दंत कथा है। तीन सौ ईसवी पूर्व वहाँ वेरासस नामक पुरोहित था। उसने लिखा है- आरडेट्स की मृत्यु के बाद उसके पुत्र ने १८ 'सर' तक राज्य किया। एक सर ३६ सौ वर्षों का होता है। इसी अवधि में एक बार भीषण बाढ़ आई। इसकी सूचना राजा को स्वप्न द्वारा पहले ही मिल चुकी थी। अत: उसने अपने लिए एक नाव बनवा ली थी। नाव में बैठकर वह जलप्लावन देखता-घूमता रहा। जब जलप्लावन का वेग कम हो गया, तो उसने नाव में ही बैठे-बैठे

तीन बार पक्षी उड़ाए। अंतिम बार देवता प्रसन्न हुए और शांति का वातावरण बना।

बाइबिल के अनुसार—जल देवता 'नूह' को खबर मिली कि धरती पर जल-प्रलय होगी। फिर ऐसा ही हुआ। चराचर इस भीषण जल-प्रलय में समाहित हो गए। जल-देवता 'नूह' तथा उनके कुछ साथी नौका में बच निकले। नौका द्वारा आराकान पर्वत पहुँचे। वहाँ दसवें महीने के पहले दिन जल कम होना शुरू हुआ। धीरे-धीरे पर्वत श्रेणियाँ दीखने लगीं। फिर अन्य हिस्से भी। हजरत 'नूह' ने ही मानवता का विकास किया। सुमेरियन ग्रंथों में भी जलप्लावन का संकेत है। चीनी पुराण-साहित्य में भी जलप्लावन की कथाएँ विद्यमान हैं।

भारत में तो शतपथ ब्राह्मण से लेकर महाभारत और विविध पुराणों तक में जल-प्रलय का वर्णन मिलता है। महाभारत के वन-पर्व में मत्स्योपाख्यान के अंतर्गत यह कथा है कि विवस्वान मनु ने दस हजार वर्ष हिमालय पर तपस्या की। उस समय एक मछली की प्रार्थना पर उन्होंने उसकी जीवन-रक्षा की। तब मछली ने उनको आगामी भीषण जलप्लावन की अग्रिम जानकारी दी, साथ ही यह भी कहा कि तुम सप्तऋषियों के साथ नौका में मेरी प्रतीक्षा करना। अन्य पर्वों में भी इस जलप्लावन का सुविस्तृत वर्णन है।

संपूर्ण प्राचीन विश्व-साहित्य में जल-प्रलय की ये कथाएँ निश्चय ही किसी घटित घटना की ही स्मृतियाँ हैं। अभिव्यक्ति की शैली भिन्न-भिन्न सभ्यताओं के परिवेश और सांस्कृतिक चेतना के अनुरूप अलग-अलग हैं, किंतु उनमें एक आंतरिक अविच्छिन्नता है। जल-प्रलय की बात बड़ी है, पर उसके छोटे-छोटे रूप अन्य प्रकार से भी दृष्टिगोचर होते रहते हैं। भूकंप, विस्फोट, बाढ़ आना, वृष्टि, अतिवृष्टि, महामारी आदि कारणों से कम विनाश नहीं होता

है। आएदिन जहाँ-तहाँ होते रहने वाले युद्ध और महायुद्ध भी संपत्ति और प्राणियों की कम हानि नहीं करते।

एक ओर विनाशकारी घटनाएँ होती हैं तो दूसरी ओर उत्पादन और अभिवृद्धि का उपक्रम देखकर भी आश्चर्यचकित रहना पड़ता है। वनस्पति के सहारे ही जीवधारियों का आहार-निर्वाह होता है। उसका खरच जितना है, उसे देखते हुए उत्पादन की मात्रा कम नहीं, वरन बढ़ी-चढ़ी ही रहती है। खाने वाले प्राणी और ग्रीष्म जैसी नष्ट कर देने वाली परिस्थितियों का सामना करते रहने पर भी वन-संपदा और वनस्पति की सुषमा पृथ्वी पर छाई ही रहती है। हरितमा के लिए प्रस्तुत सभी चुनौतियाँ अंततः निरस्त ही होती रहती हैं और अपनी धरती की हरियाली में घट-बढ़ होती है, पर अंत उसका कभी भी नहीं होता।

तनिक-सी दीखने वाली एक भिनभिनाती मक्खी एक ही ग्रीष्म ऋतु में ४० हजार संतानें पैदा कर सकती है, यदि उसकी आकस्मिक मृत्यु न हो जाए। इन ४० हजार मक्खियों की तीन पीढ़ी में उत्पन्न संतानों को एक कतार में रखा जाए, तो पृथ्वी से सूरज तक की दूरी से कई गुनी लंबी कतार बन जाए।

एक परिपक्व पोस्त में ३ हजार बीज होते हैं। यदि हर बीज से एक पौधा उगने दिया जाए और फिर उनमें से हर पौधे में कम-से-कम एक पोस्त लगने लगे, फिर उनमें से हर एक के तीन हजार बीजों का उपयोग भी पौधे ही पैदा करने के लिए किया जाए, तो इस क्रम से ५० वर्षों में एक ही वृक्ष के वंश विकास द्वारा पूरी पृथ्वी ढक सकती है।

प्रकृति की गतिविधियों का जितना ही अधिक निरीक्षण-विश्लेषण किया जाए, यही ज्ञात होता चलेगा कि वह अत्यंत दयामयी व कुशल है, किंतु इस दया में आवश्यक उग्रता व रौद्ररूप भी सम्मिलित है। वस्तुतः संतुलन ही प्रकृति का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व

सार्वभौम अंत:सूत्र है। संतुलन की यह प्रकृति-प्रवृत्ति हमें विभिन्न पशु-पक्षियों की प्राकृतिक संरचना में भी दिखाई पड़ती है।

दक्षिणी अमेरिका का 'स्लाथ' पक्षी संपूर्ण जीवन पेड़ पर औंधे मुँह लटके-लटके काट लेता है। उसका आहार हरे-पत्ते, टहनियाँ आदि हैं। प्रकति ने उसे ऐसे बाल दिए हैं, जिनके कारण वर्षा ऋतु में भी उलटे लटके रहने पर भी बरसात का पानी नीचे टपक जाता है, यानि उसके बाल भी उलटे होते हैं, उसके औंधे लटकने पर वे नीचे झूलते रहते हैं। यदि ऐसा न होता, तो बरसात का पानी निरंतर ऊपर टपकते रहने के कारण अपना वंश चलाते रहने के लिए वह बच न पाता।

सूर्य भी मरने की तैयारी में

अपने सौरमंडल के ग्रह-उपग्रहों की विविध गतिविधियों का स्रोत सूर्य है। उससे जो ऊर्जा नि:सृत होती है, उसी के बलबूते सौर परिवार अपना निर्वाह करता है। गरमी के बिना न चूल्हा ही जलता है और न रेल, मोटर दौड़ती है। शरीर की गरमी चुक जाए, तो निस्तब्धता छा जाएगी और मौत आ दबोचेगी। तेल, पेट्रोल न हों, तो गाड़ी कैसे चलेगी? बिजली न हो, तो उसके सहारे चलने वाले कारखाने ठप पड़ जाएँगे। सूर्य का ऊर्जा उत्पादन बंद हो जाए, तो सौरमंडल के ग्रह स्वत: ठंढे हो जाएँगे और इस परिवार के पारस्परिक संबंध क्षीण होने से विघटन चल पड़ेगा। तब ठंढे ग्रह किसी अन्य गरम सूर्य का आश्रय पाने के लिए अपना देश छोड़कर किसी लंबी यात्रा पर चल पड़ने की तैयारी करेंगे। जलाशय सूख जाने पर पक्षी भी तो उड़कर अन्यत्र चले जाते हैं।

जन्म के उपरांत हर वस्तु मरण की दिशा में चलती है। विकास और यौवन के पड़ाव इसी बीच में आ जाते हैं। अपने सूर्य का बचपन चला गया। किशोर काल व्यतीत हो गया। प्रौढ़ावस्था भी व्यतीत हो गई। यह उसकी ढलती उम्र है, जो

उसे क्रमशः मरण की दिशा में घसीटे लिए जा रही है। जिस पृथ्वी पर हम रहते हैं, वह शतपथ ब्राह्मण के अनुसार सूर्य की पतिव्रता पत्नी है। वह उसी की कमाई खाती है। सुरक्षा के लिए उसी पर आश्रित है और पति के मरण पर साथ सती होने के लिए समुद्यत है। अस्तु, सूर्य के मरण का सीधा संबंध अपनी पृथ्वी के साथ होने और उसके अंचल में पलने वाले हम सब मनुष्यों का भाग्य भी इन अभिभावकों की स्थिति पर अवलंबित है। सूर्य और पृथ्वी की स्थिति से हम मानव प्राणी अप्रभावित नहीं रह सकते। अस्तु, अपना भविष्य-चिंतन करते समय हमें सूर्य और पृथ्वी के भविष्य का विचार करना पड़े, तो उसे अनावश्यक नहीं माना जाना चाहिए।

सूर्य ठंडा हो रहा है। उसके फलस्वरूप पृथ्वी भी ठंढी हो रही है। साथ ही उसकी सक्रियता भी घट रही है। अब से एक करोड़ वर्ष पहले दिन-रात २२ घंटे के होते थे और वर्ष ४०० दिन का था। अब वर्ष में प्रायः ४० दिन की कमी और दिनमान में २ घंटे की बढ़ोत्तरी हो गई है। वह अपनी धुरी पर भी अपेक्षाकृत मंद गति से घूमने लगी है और सूर्य की परिक्रमा करने वाली यात्रा में भी धीमापन आ गया है।

खगोलवेत्ताओं की गणना है कि कोई पाँच अरब वर्ष बाद अपनी पृथ्वी की स्थिति बड़ी विचित्र हो जाएगी। एक दिन ७२० घंटे का अर्थात् आज के दिन की तुलना में ३० गुना बड़ा होने लगेगा। रात्रि अब के १५ दिनों की बराबर होगी और दिन भी इतना ही बड़ा होगा। तब रात्रि में कई बार जागकर काम करने की और दिन में कई-कई बार पूरी नींद सोने की आवश्यकता पड़ा करेगी।

पृथ्वी की उदासी देखकर चंद्रमा का जी उससे खट्टा होता जा रहा है। इन दिनों चंद्रमा हर ३० वर्ष में पृथ्वी से एक फुट दूर हट

जाता है। जब पृथ्वी के दिन ७२० घंटे के होंगे, तो चंद्रमा अब जितनी दूर, ढाई लाख मील है, उससे प्राय: ड्यौढ़ी दूरी पर चला जाएगा, किंतु यह स्थिति देर तक वैसी न रहेगी। कई अंतर्ग्रहीय दबावों के कारण चंद्रमा फिर वापस लौटेगा और धरती से मात्र ९ हजार मील दूर रह जाएगा। आकार में अब से १० गुना बड़ा दिखाई पड़ने लगेगा। वह समय चंद्रमा के जीवन-मरण का होगा। यदि वह कुछ कदम और आगे बढ़ा, तो पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के दबाव से वह ईंधन के ढेर की तरह जलता दिखाई पड़ सकता है। तब उसकी राख कचरा पृथ्वी के इर्द-गिर्द वैसे ही घूमने लगेगा, जैसा कि शनि ग्रह के इर्द-गिर्द ग्रह-उपग्रह का चूरा एक सघन छल्ले के रूप में घूमता रहता है।

बुझते हुए दीपक की लौ जिस प्रकार बार-बार उछलती व चमकती है—मरणासन्न रोगी जिस तरह लंबी साँसें लेता है, उसी तरह सूर्य के हाइड्रोजन का एक बड़ा भाग हीलियम में बदल जाने के कारण कई तरह की नाभिकीय प्रतिक्रियाएँ होंगी। उसका आकार अब से २० गुना अधिक हो जाएगा और रंग अंगारे जैसा लाल। तब पृथ्वी के भी प्राण संकट में फँस जाएँगे। वह सूर्य के अति निकट जाकर परिक्रमा करेगी, फलत: उसके ठोस पदार्थ पिघलकर द्रव बन जाने, पानी का भाप बनकर अंतरिक्ष में उड़ जाने जैसे संकट खड़े हो जाएँगे। ऐसी दशा में उस पर किसी प्राणी या वनस्पति जैसा कोई जीवन चिह्न भी शेष नहीं रह जाएगा, किंतु यह सब रहेगा तभी तक जब तक कि सूर्य गरम है और पृथ्वी के निकट होने के कारण उसे अधिक गरम करता है। जब वह स्वत: ठंढा होता जाएगा, तो स्वभावत: पृथ्वी भी ठंढी होगी। तब पृथ्वी के प्रभाव-क्षेत्र में भरी हुई गैसें पुन: बादल बनकर बरस सकती हैं और जीवन का श्रीगणेश नए सिरे से हो सकता है। उस समय के जीवधारी आज जैसे होंगे या अन्य किसी आकृति-प्रकृति के यह अभी कहा जा सकना कठिन है।

निश्चित रूप से वह शीतजीवी होंगे, पर उन बेचारों को भी अधिक समय स्थिर रहने का अवसर कहाँ मिलेगा ? पिछली सृष्टि गरमी से जलकर नष्ट हुई थी, तो यह अल्पजीवी नई सृष्टि शीत से ठिठुरकर थोड़े-से समय में अपना दम तोड़ देगी। तब पृथ्वी बरफ से ढकी एक बड़ी गोली मात्र दृष्टिगोचर होगी।

सूर्य बुझते-बुझते एक टिमटिमाते दीपक की तरह रह जाएगा, गरमी समाप्त हो जाने के कारण सौरमंडल के सभी ग्रह-उपग्रह ठंढे हो जाएँगे, सघन अंधकार उन्हें ढक लेगा। इतने पर भी बिखराव रोकने का एक कारण तब भी बहुत दिन बना रहेगा। सूर्य में भरा हुआ पदार्थ विस्तृत है। वह अपने विस्तार के कारण ही आकर्षण शक्ति बनाए रहेगा और उसमें बँधे हुए ठंढा अँधेरा सौरमंडल किसी प्रकार अपनी कक्षा एवं धुरी पर परिभ्रमण करता रहेगा। यह नहीं कहा जा सकता कि उस नीरस स्थिति को प्रकृति कब तक सहन करेगी, हो सकता है कि इस शून्य को भरने के लिए ब्रह्मांड के कोई समर्थ सूर्य कहीं से टूट पड़ें और इन अनाथ बालकों की साज-सँभाल नए सिरे से करने लगें। एक संभावना और भी है कि यह अनाथालय जैसा सौरमंडल अपनी पृथ्वीसमेत नवजीवन पाने के लिए अंतरिक्ष की लंबी यात्रा पर निकल पड़े। उस महायात्रा के भटकाव से त्राण पाकर स्थिरता का संरक्षण मिलने में किन-किन परिस्थितियों का सामना करना पड़ेगा, इसका अनुमान लगाने में अभी तो मनुष्य की वर्तमान बुद्धि ने असमर्थता ही घोषित कर दी है।

पृथ्वी की परिधि भूमध्यरेखा पर ४०७६० किमी० और ध्रुवों पर ४०००० किमी० है। उसका व्यास भूमध्य रेखा पर १२७५३ किमी० है। धरातल क्षेत्रफल ५१ करोड़ २ लाख वर्ग किमी० है। सूर्य की परिक्रमा करते हुए उसकी गति १००१९१ किमी० प्रति घंटा है।

पृथ्वी के आकार से सूर्य का आकार १३ लाख गुना बड़ा है। जिस ध्रुव तारे की अपना सूर्य अपने ग्रह-परिवारसमेत प्रदक्षिणा करता है, वह उसकी तुलना में ३ लाख गुना बड़ा है। ध्रुव के परिवार में अनेक सौरमंडल सम्मिलित हैं। वह उन सबको समेटे हुए महा ध्रुव की परिक्रमा के लिए दौड़ रहा है। महाध्रुव का आकार, प्रकाश और चुंबकत्व अपने ध्रुव से अत्यधिक वृहत है।

इतने वजन से लदे हुए, इतनी तीव्र गति से चल रहे इस परिभ्रमण में शक्ति खरच होती है और वह कहीं-न-कहीं से आनी ही चाहिए। स्पष्ट है कि सूर्य की उत्तेजना से पृथ्वी का अंतराल उफनता है। दोनों के समन्वय से वह क्षमता उत्पन्न होती है, जो इस भूमंडल की असंख्य गतिविधियों को संचालित करती है। साधन-सामग्री सीमित है, असीम नहीं। उत्पादन की तुलना में जब खरच बढ़ जाता है, तो जीवनीशक्ति घटती है और शरीर जराजीर्ण होते-होते मृत्यु के मुख में प्रवेश कर जाता है। यही अंत ग्रह-नक्षत्रों का भी होता है। अपने सूर्य का और उसकी आश्रिता धरती का भी इसी प्रकार अंत होता है। देर या सबेर में मरणधर्मा मनुष्यों की भाँति यह विशालकाय सूरज भी अपनी सहेली धरतीसमेत मरने की तैयारी कर रहा है। हमें भी इस तथ्य को समझना चाहिए और अपने मरण को ध्यान में रखना है। यह नहीं सोचना चाहिए कि सूर्य पृथ्वी या अन्य और किसी ग्रह-नक्षत्र को ही मरना पड़ता है या मरना पड़ेगा। जन्म के साथ ही विकास का भी अनवरत क्रम चल रहा है।

ब्रह्मांड फैल रहा है

फ्रीडमैन से लेकर आइंस्टीन तक अब संसार के सभी प्रमुख अंतरिक्षविज्ञानी यह स्वीकार करते हैं कि ब्रह्मांड निरंतर फैल रहा है। सभी खगोलीय पिंड एकदूसरे से दूर हटते जा रहे हैं। यह बिलगाव जिस गति से बढ़ता जाता है, उसी अनुपात से उनकी धावन क्रिया में तीव्रता आती जाती है। आकाश गंगाएँ पहले की

अपेक्षा अब एकदूसरे से बहुत दूर चली गई हैं और वह फासला निरंतर बढ़ता ही जा रहा है। आखिर यह फैलाव कब तक बढ़ता चलेगा? क्या कभी रुकेगा नहीं? ब्रह्मांड पोल का कोई अंत नहीं है। क्या नक्षत्रों की वर्तमान बिलगाव प्रतिस्पर्द्धा अनंत काल तक ऐसे ही चलती रहेगी?

इन प्रश्नों के उत्तर खोजते-खोजते खगोलवेत्ता इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि ग्रह-नक्षत्रों की तरह यह शून्य भी गोल है। जिस तरह पृथ्वी पर सीधी रेखा बनाकर लगातार चलते ही रहा जाए, तो चलने वाला अंततः वहीं जा पहुँचेगा, जहाँ से उसने यात्रा आरंभ की थी। ठीक इसी तरह सभी आकाशीय पिंड जहाँ से चले हैं, वहाँ से आगे चल-बढ़ तो रहे हैं, पर घूमते-घूमते अंततः वहीं जा पहुँचेंगे, जहाँ से उनकी यात्रा आरंभ हुई थी।

बच्चे धीरे टुमकते हैं, वे उँगली पकड़ने पर चलते हैं, जवानों की चाल तेज होती है और बूढ़े होने पर गति फिर मंद हो जाती है और लाठी के सहारे किसी तरह थोड़ा-बहुत चला जाता है। यही हाल इन ग्रह-पिंडों का भी होना है। वे आरंभ में मंद गति से नाचते-दौड़ते थे, पीछे अब उनकी प्रौढ़ावस्था में चाल बढ़ गई है। वे एकदूसरे से दूर हटने में अपनी तीव्र गति को भी प्रतिष्ठा एवं प्रतिस्पर्द्धा का प्रश्न बनाते जा रहे हैं, पर यह सब देर तक चलने वाला नहीं। मात्र कुछ अरब-खरब वर्ष लगेगा कि उनकी कमर झुक जाएगी और गरदन हिलने लगेगी, तब वे लड़खड़ाते हुए गिरते-पड़ते किसी प्रकार चलने की लकीर पीटेंगे और फिर थककर बैठ जाएँगे। हो सकता है कि बैठने के साथ-साथ ही उनकी मृत्यु क्रिया भी संपन्न हो जाए।

अंतरिक्ष में फैली हुई आकाश गंगाएँ अब एकदूसरे से हजारों प्रकाश वर्ष की दूरी पर हैं, पर आरंभ में ऐसा न था। ब्रह्मांड का सारा पदार्थ एक ही जगह केंद्रित था। तब एक ठोस सिल्ली जैसा

था। फ्रीडमैन के अनुसार अब से कोई दस अरब वर्ष पहले आदिम संसार का पदार्थ घनत्व की चरम सीमा पर था। पीछे उसमें विघटन प्रारंभ हुआ और पानी के बबूलों की तरह, टूटे हुए काँच के टुकड़ों की तरह वह बँटता चला गया। उनकी रेंगने जैसी हलचल ने बीच में पोल पैदा की और पोल में प्रति पदार्थ, शैतान घुस बैठा, उसने हर टुकड़े को बहकाया और अलग रहने, दूर जाने और अलग घर-परिवार बसाने के लिए रजामंद कर लिया। बस यहीं से ब्रह्मांडीय हलचलें आरंभ हो गईं। तब से वह सिलसिला कभी घटा नहीं, वरन क्रमशः तेजी ही पकड़ता गया। आरंभ में घनीभूत 'बंद ब्रह्मांड' था। अब वह विरल और खुला ब्रह्मांड कहे जा सकने की स्थिति में है।

ब्रह्म अनादि और अनंत हो सकता है, पर ब्रह्मांड के बारे में वैसा नहीं कहा जा सकता है। अधिक-से-अधिक यह कहा जा सकता है कि पदार्थ-प्रकृति अनादि अनंत है। वह ब्रह्म की तरह ही शाश्वत है। ब्रह्मांड का अर्थ यदि आकाशीय पिंडों का समूह कहा जाए, तो उसका आरंभ भी भूतकाल में कभी अवश्य ही हुआ था और एक दिन उसका अंत भी होगा। यद्यपि जन्म-मरण की ठीक जन्मपत्री नहीं बन सकती, तो भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि वह अपने गणना साधनों को चुनौती देता हुआ किसी-न-किसी दिन जन्मा जरूर था और भले ही हम उसकी ठीक तिथि और घड़ी न बता सकें तो भी उसका मरण निश्चित है।

सोवियत विज्ञान एकादमी के दो मूर्द्धन्य वैज्ञानिक येवगेची लिफशित्स और इजाक खालातनिकोव ने अमेरिकी वैज्ञानिकों की उस मान्यता का खंडन किया है कि पदार्थ अपनी आदिम स्थिति में बहुत गरम था और केवल न्यूट्रोनों का बना था। सोवियत वैज्ञानिकों ने अपने पक्ष समर्थन में अनेकों तर्क और प्रमाण प्रस्तुत करते हुए कहा है—आदिम पदार्थ ठंढा था और प्रोट्रोनों, इलेक्ट्रोनों से बना था। किसी पदार्थ का ठोस रहना तभी संभव है, जब वह ठंढा हो।

गरपी स्वभावत: विरलता उत्पन्न करती है। ब्रह्मांड में हाइड्रोजन तत्त्व का बाहुल्य है। वह प्रारंभ में जमे बादल की तरह था, पीछे वह ओलों की तरह बरसने लगा और आकाशीय पिंडों के रूप में विरल हो गया।

इन पिंडों का मन दुटप्पा है। वे दोहरी चाल चल रहे हैं और दुरंगी नीति अपना रहे हैं। एक ओर तो उनका अहंकार अलग अस्तित्व सिद्ध करने और पृथकता में वर्चस्व सिद्ध करने में लगा हुआ है दूसरी ओर विवेक कहता है कि इस मूर्खता से क्या लाभ? संयुक्त रहने और मिल-जुलकर रहने का अपना आनंद है। अब अपना शैशव एक घर में हँसी-खुशी से बीत रहा था, तो जब फिर उसी तरह रहने में क्यों आपत्ति होनी चाहिए? महत्त्वाकांक्षाएँ प्रगति-प्रगति-प्रगति की रट लगाए हुए हैं और लंबी कुलाचें भरने के लिए विवश करती हैं। दूसरी ओर शांति, स्नेह और सहयोग की ओर भी मन ललचाता है। सो दोनों प्रवृत्तियाँ अपना-अपना काम करती हैं। एक ओर तारक भाग रहे हैं। साथ ही एकदूसरे को अपने प्रभाव में पकड़े जकड़े भी हैं। पृथकतावाद का बोलबाला है, फिर भी हर आकाश गंगा ने, हर महासूर्य ने अपना अच्छा-खासा परिवार बसा रखा है और ढेरों पोते, परपोतों को लेकर एक-एक गाँव, मुहल्ला बसा लिया है।

यह कहना कठिन है कि आकाशीय पिंड दूर जा रहे हैं या वापस लौट रहे हैं। अधिक यही कहा जा सकता है कि उनकी आधी दौड़ की दिशा में और आधी वापसी की दिशा में निर्धारित है। डर्बी के घोड़े एक गोल चक्कर में दौड़ते हैं और अंत में वे वहीं आ खड़े होते हैं, जहाँ से चले थे। लगता है—आकाशीय पिंड पहले से ही डर्बी के घोड़ों की तरह एक गोल चक्कर में दौड़ दिखाने और हम दर्शकों का कुतूहल बढ़ाने के लिए धमा-चौकड़ी लगाए हुए हैं। वे एक दिन अपने पुराने अस्तबल में जा बधेंगे।

नौजवानी का जोश आखिर ठंढा तो होना ही है। खून की गरमी सदा एक-सी तो नहीं बनी रहती। महत्त्वाकांक्षाओं का आवेश शराब के नशे की तरह सदा तो नहीं बना रहता। खुमारी उतरती है, तो नए ढंग से सोचना पड़ता है, तब शांति के साथ रहने और चैन की साँस लेने को जी करता है। मनुष्यों की तरह इन ग्रह-पिंडों का भी यही हाल होना है। जब वे आधी मंजिल पार कर लेंगे और प्रौढ़ावस्था की ढलती उम्र आ जाएगी, तो वे अपनी घुड़दौड़ हलकी करेंगे, लँगड़ाते-लड़खड़ाते चलेंगे। ठंढे होते जाएँगे और वह ठंढक जहाँ शीतल, शांतिदायक होगी, वहाँ नीरस भी। अकड़े-जकड़े अंग सुस्ताने को विवश कर देंगे, तो यह बूढ़ा ब्रह्मांड थककर बैठ जाएगा और लंबी चादर ओढ़कर चिरनिद्रा की गोद में चला जाएगा।

भगवान कितना विशाल है, विशाल ब्रह्मांड जैसा। भगवान कितना लघु है, अणु-परमाणु जैसा। मनुष्य भी यदि अपनी आत्मसत्ता को समझे और विस्तार की भूमिका में उतरे, तो वह भी विभु है, महान है, पर यदि संकीर्ण स्वार्थपरता की, व्यक्तिवादी अहंता की तुच्छता में सीमाबद्ध होकर रह जाए, तो वह वस्तुतः इतना क्षुद्र है, जिसे महत्त्वहीन, नगण्य एवं उपहासास्पद ही कहा जा सकता है।

अपने सूर्य को ही लें। उसका व्यास ८६५३८० मील है। उसकी कुल परिधि २७००००० मील है। अनुमानित भार १९ करोड़ ९८ लाख महाशंख टन। वह अपनी धुरी पर २५ दिन ७ घंटे ४८ मिनट में एक चक्कर लगाता है। उसकी सतह पर ६०० डिगरी सेंटीग्रेड तापमान है और मध्य गर्भ में १५००००० डिगरी सेंटीग्रेड। वह दो सौ मील प्रति सेकंड की उड़ान उड़ता हुआ महाध्रुव की परिक्रमा में निरत है। यह परिक्रमा २५ करोड़ वर्ष में पूरी होती है। इस परिक्रमा में उसके साथी और भी कई सूर्य होते हैं, जिनके अपने-अपने सौरमंडल भी हैं।

पृथ्वी से सूर्य १०९ गुना बड़ा है। दोनों के बीच की दूरी ९२०००००० मील है। यदि हम ६०० मील प्रति घंटे की गति से उड़ने वाले अपने तीव्रतम वायुयानों में बैठकर लगातार उड़ें, तो उस दूरी को पार करने में १८ वर्ष लगेंगे।

सूर्य से पृथ्वी पर जो शक्ति बरसती है, वह इतनी है कि एक वर्ग इंच की शक्ति से ६० हार्स पावर का इंजन चल सके। पूरी पृथ्वी पर सूर्य जो ताप फेंकता है, वह प्रति सेकंड इतना होता है, जितना १२ हजार अरब टन कोयला जलाने पर ही पैदा किया जा सकता है। सूर्य का प्रकाश पृथ्वी पर प्रति वर्ग इंच इतना होता है, जितना तीन लाख मोमबत्तियाँ जलाने से पैदा किया जा सके। सूर्य की शक्ति का २२० करोड़वाँ भाग ही पृथ्वी पर पहुँच पाता है।

वैज्ञानिकों की नवीनतम गणना के अनुसार ब्रह्मांड में लगभग १० करोड़ सौरमंडल और १० अरब तारे हैं। इन तारों में कोई-कोई कल्पनातीत विस्तार के हैं। अकेला ज्येष्ठा ही इतना बड़ा है कि उसके पेट में अपने तीन करोड़ सूर्य घुसकर बैठ सकें। प्रख्यात 'एंड्रोमीडा' नीहारिका हमसे ८ लाख प्रकाश वर्ष दूर है, जबकि एक प्रकाश वर्ष ५८ खरब ८० अरब मील का माना जाता है।

अपनी धरती का व्यास १२७०० किलोमीटर और वजन ६,६००,०००,०००,००० अरब टन है। वह ३० किलोमीटर प्रति सेकंड की उड़ान भरती हुई ३६५ दिन में सूर्य की एक परिक्रमा पूरी करती है। सूर्य और पृथ्वी के बीच की औसत दूरी ९ करोड़ ३० लाख मील रहती है। धरती का जन्म अब से ५ अरब वर्ष पूर्व हुआ। ३ अरब वर्ष पूर्व उस पर जीवन प्रारंभ हुआ। इनसे मनुष्य का अस्तित्व १० लाख वर्ष पहले ही हुआ है। इससे पूर्व अन्य जलचर, थलचर, नभचर प्राणी उत्पन्न हो चुके थे। इनमें से ८० लाख जातियों के प्राणी अभी भी पाए जाते हैं। पुराणों में बताई गई

८४ लाख योनियों में से अब सिर्फ ४ लाख जीव-जातियाँ खोजनी शेष रह गई हैं।

यह अपना सौरमंडल भी कितना विचित्र है। उपग्रहों की सदस्यता के बारे में हममें से बहुतों को यह भी नहीं मालूम है कि मंगल पर २, बृहस्पति पर १२, शनि पर ९, यूरेनस पर ५ और नेपच्यून पर २ चंद्रमा भ्रमण करते हैं। मात्र हमारा एक चंद्रमा ही सौरमंडल का एक उपग्रह नहीं है, कुल मिलाकर उनकी संख्या ३१ है।

हमारा वर्ष ३६५ दिन का और दिन २४ घंटे का होता है, किंतु अन्य ग्रहों की स्थिति भिन्न है। धरती पर जितना बड़ा दिन होता है, उसके हिसाब से लेखा-जोखा लिया जाए, तो सूर्य का एक दिन हमारे १७६ दिनों कि बराबर और वर्ष ८८ दिनों के बराबर होता है।

बुध का दिन २४३ दिन का वर्ष २२५ दिन का है। मंगल का दिन पृथ्वी के लगभग बराबर है। उसका दिन २४.६ घंटे का और वर्ष १९ वर्ष का है। बृहस्पति का दिन १० घंटे का और वर्ष १२ वर्ष का, शनि का दिन १० घंटे और वर्ष २९ वर्ष का, यूरेनस का दिन ११ घंटे और वर्ष ८४ वर्षों का, नेपच्यून का दिन १६ घंटे का और वर्ष ३६५ वर्षों का, प्लूटो का एक दिन हमारे ६ दिन ९ घंटों की बराबर और उसका एक वर्ष हमारे २४८ वर्षों की बराबर है। उनके आकार में भी भारी भिन्नता है। अपने मीलों के हिसाब से सौरमंडल का व्यास नापा जाए, तो सूर्य का व्यास ८,६४,०००, बुध का ३,१००, शुक्र का ७,५००, पृथ्वी का ७,९२०, मंगल का ४,१५०, बृहस्पति का ८७,०००, शनि का ७१,५००, यूरेनस का ३२,०००, नेपच्यून का ३१,०००, प्लूटो का ४,५०० मील है। सूर्य से किस ग्रह की दूरी कितनी है, इसका हिसाब लगाने के लिए अपने मील बहुत झंझट भरा विस्तार करेंगे, इसलिए अपने १० लाख मील का एक सौरमंडलीय मील मानकर चला जाए, यह ठीक रहेगा। तब उस अंतरिक्ष मील के अनुसार सूर्य से उसके सौर परिवार की दूरी इस प्रकार नापी जा

सकती है। बुध की ३६, २ शुक्र की ६६,९ पृथ्वी की ९२,९ मंगल की १४१,२ बृहस्पति की ४८३ शनि की ८८२,६ यूरेनस की १७८३०७ नेपच्यून की २७८७ प्लूटो की ३६२१,११।

अपने सौरमंडल का एक आनुमानिक नकशा धरती पर बनाना हो, तो पृथ्वी को एक इंच की गोली जितनी बनाना चाहिए। तब सूर्य उससे ३२२ गज दूर ९ फुट व्यास का बड़ा गोला होगा। सूर्य के १२४ गज दूर बुध, २३२ गज दूर शुक्र होंगे, तब ३२२ गज पृथ्वी बनानी पड़ेगी। इसके बाद मंगल ४८८, बृहस्पति १६७२, शनि ३०६७, अरुण ५१५९, वरुण ९६५६, और यम १३३०० गज दूर अंकित करने पड़ेंगे। बेचारा अपना चंद्रमा तो पृथ्वी से ३० इंच दूर एक चने के दाने जितना होगा।

प्रो० फ्रेड होयल डा० फूडील्फ मिन्केवस्की आदि खगोल विद्या के मूर्द्धन्य विशेषज्ञों का कथन है कि अपने ब्रह्मांड की आयु लगभग १० अरब वर्ष है। आरंभ में ग्रह-नक्षत्र उत्पन्न होने की गति धीमी थी, पर अब ज्यों-ज्यों ब्रह्मांड बूढ़ा होता जाता है, त्यों-त्यों उसकी सिकुड़न बढ़ रही है। गरमी के कारण फैली हुई गैसों का तापमान घट रहा है। फलतः सिकुड़न उत्पन्न होने से ग्रह-नक्षत्र उत्पन्न होने की चाल तेज हो गई है। हमारी अपनी आकाश गंगा ही लगभग एक नये सूर्य को हर वर्ष जन्म दे देती है। यह गति आरंभिक काल की अपेक्षा आठ गुनी अधिक तेज है। ब्रह्मांड में सबसे अधिक मात्रा में हाइड्रोजन गैस से बना हुआ पदार्थ भरा पड़ा है।

वाशिंगटन की नौ सेना अनुसंधान प्रयोगशाला ने आकाशीय पिंडों में सबसे रहस्यमय तारे 'क्वासर' बताए हैं। वे बहुत बूढ़े और बहुत दूर होते हुए भी बहुत चमकीले हैं और सबसे खतरनाक एक्स किरणें प्रचंड मात्रा में समस्त ब्रह्मांड में बिखेरते हैं। वही अनुदान पृथ्वी को भी विपुल मात्रा में मिलता है। राकेटविज्ञानी डा० हर्बर्ट

फ्रीडमेन का कथन है कि इन क्वासरे ने समस्त ब्रह्मांड को एक्स किरणों का एक प्रकार से महासागर ही बनाया हुआ है। क्वासरों में से एक निकटवर्ती '३ सी १४०' को ६०० करोड़ प्रकाश वर्ष दूर माना गया है। एक प्रकाश वर्ष अर्थात १०००००० करोड़ किलोमीटर दूरी। किलोमीटरों के हिसाब से इन क्वासरों की दूरी कितना अकल्पनीय है ?

अपनी नीहारिका बीस हजार प्रकाश वर्ष मोटी और एक लाख प्रकाश वर्ष लंबी है। यह गोल आकार की होने से चौड़ाई भी लगभग इतनी ही है। उसके परिवार में लगभग सौ अरब ग्रह-नक्षत्र हैं।

अपनी मंदाकिनी नीहारिका जैसी इस ब्रह्मांड में करोड़ों हैं। उनमें से हमारे अधिक समीप एंड्रोमेडा (देवयानी) है। हमें उसी के बारे में कुछ अधिक जानकारी है। इसकी दूरी सबसे निकट होते हुए भी अपनी आकाश गंगा से बीस लाख प्रकाश वर्ष दूर है। उसे हम मृगसिर नक्षत्र में खुली आँखों से भी देख सकते हैं। पर वह प्रकाश जो दिखाई देगा, बीस लाख प्रकाश वर्ष पुराना होगा, जबकि हमारी पृथ्वी का जन्म अथवा विकास का आरंभ भी नहीं हुआ था। आज वहाँ क्या स्थिति है, इसे जानना हो, तो इतने ही समय प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। समस्त ब्रह्मांड कितना विस्तृत है, उसका ठीक विवरण प्राप्त नहीं, पर संसार की सबसे बड़ी रेडियो दुरबीन, जो अमेरिका के पालोमर पर्वत पर लगी है, उससे पाँच अरब प्रकाश वर्ष दूरी की नीहारिकाओं को देख लिया गया है।

ये नीहारिकाएँ अपने स्थान पर विद्यमान नहीं हैं, वे एकदूसरे से उसी तरह दूर भागती जा रही हैं, जैसे दागने के बाद बंदूक से उसकी गोली दूर भागती है। इस भगदड़ की चाल साठ हजार किलोमीटर प्रति सेकंड है। समस्त विश्व-ब्रह्मांड का फुलाव-विस्तार

कितना गुना हो चुका होगा, इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि पिछले दो वर्ष में ही उसका पेट दूना फूल चुका है। यह माप कर ली गई है। प्रगति के पथ पर सभी ग्रह-नक्षत्र तेजी से भाग रहे हैं। जिस दिन यह विकास स्पर्द्धा बंद होगी, उसी दिन ब्रह्मांड के सामने महाप्रलय आ उपस्थित होगी।

विश्व-ब्रह्मांड की विशालता और अपनी क्षुद्रता की जब तुलना करते हैं, तो अपना अहं सहज ही जल जाता है। हम क्या हैं? वे संपदाएँ क्या हैं, जिस पर इतराते हैं और यह जीवन क्या है, जिसे हम अमर समझते हैं, इसे ठीक तरह समझने के लिए उस ब्रह्मांड का स्वरूप भी जानना पड़ेगा, जिसके हम एक नगण्य-से अंग-अवयव हैं।

ब्रह्मांड कितना विशाल और उसकी तुलना में अपनी पृथ्वी कितनी क्षुद्र? अपनी पृथ्वी पर रहने वाले कोटि-कोटि प्राणियों के बीच मनुष्य का एक नगण्य-सा अस्तित्व और चार सौ करोड़ मनुष्यों के बीच हमारी नगण्य-सी एक सत्ता। इन सबको तुलनात्मक दृष्टि से देखें, तो प्रतीत होगा कि शरीर में रहने वाली खरबों कोशिकाओं में से एक सत्ता जितनी स्वल्प है, उससे भी असंख्य गुनी न्यून अपनी सत्ता है। ब्रह्मांड की तुलना में पिंड और पिंड की तुलना में अणु कितना क्षुद्र है। विशाल की तुलना में हम कितने तुच्छ हैं, इस पर एक क्षण के लिए भी विचार कर सकें, तो प्रतीत होगा कि अपने उपहासास्पद कलेवर में इतराने जैसी, अहंकार में इठलाने जैसी कोई बात नहीं है।

दिव्य लोकों से बरसने वाला शक्ति-प्रवाह

शक्ति सागर की प्रचंड लहरें

हमारे ज्ञान का ८३ प्रतिशत भाग नेत्रों के माध्यम से आकर मस्तिष्क को प्रभावित करता है। इस दृष्टि दर्शन का माध्यम है—प्रकाश। प्रकाश के आधार पर ही नेत्र देख पाते हैं। नेत्र स्वस्थ होते हुए भी प्रकाश के अभाव में कुछ देख नहीं सकते। अँधेरे में उनकी क्षमता कुंठित हो जाती है। साथ ही ज्ञान-द्वार भी बंद हो जाता है। अध्यात्म परिभाषा में ज्ञान और प्रकाश एक ही अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। प्रकाश दर्शन का जहाँ भी तात्त्विक विवेचना में उल्लेख हुआ होगा, वहाँ रोशनी नहीं, वरन ज्ञान-गरिमा की ही चर्चा रही होगी।

जैसे-जैसे हमारे ज्ञान का विस्तार हो रहा है, उसी प्रकार भौतिक प्रकाश की विशालता के भी परत खुलते चले जा रहे हैं। हमारे नेत्र सात रंग की प्रख्यात प्रकाश किरणों को ही देख पाते हैं, पर अब विदित हो चला है कि नेत्रों की पकड़ से बाहर भी उसकी विशालता दृश्यमान ज्योति की तुलना में अत्यधिक विस्तृत है। ब्रह्मांड किरणें, गामा किरणें, एक्स किरणें, परा बैंगनी प्रकाश, ऊष्मा तरंगें, रेडियो तरंगें, प्रकाश परिवार के अंतर्गत ही आती हैं।

इन सबमें शक्तिशाली और अद्‌भुत हैं—ब्रह्मांड किरणें। अनंत आकाश से विद्युत चुंबकीय किरणों की इस धरती पर निरंतर वैसी ही वर्षा होती रहती है, जैसे वर्षा ऋतु में बादलों से पानी की या दिन में सूर्य से ऊष्मा की वर्षा होती है। कुछ समय पहले गामा किरणें शक्ति की दृष्टि से अग्रणी मानी जाती थीं, पर अब विज्ञान जगत का ध्यान 'ब्रह्मांड किरणों' पर केंद्रित है। शक्ति-स्रोत के रूप में उन्हें

ही अब सर्वोपरि माना जाता है। इन इंद्रियातीत किरणों को विज्ञान की भाषा में कास्मिक रेज कहते हैं।

धरती से ३० किलोमीटर ऊपर जाने पर वायुमंडल में कुछ विशिष्ट परमाणुओं की वर्षा होती हुई अनुभव की जाती है। अन्वेषण बताता है कि ये कण परमाणु नहीं, वरन उनके 'नंगे नाभिक' हैं। परमाणु तो एक सौर परिवार की तरह हैं, जिसके मध्य 'नाभिक' रहता है और चारों ओर परिक्रमा करने वाले इलेक्ट्रोन गतिशील रहते हैं, किंतु ब्रह्मांड विकिरण में इलेक्ट्रानों से रहित नंगे नाभिक ही होते हैं। इनमें से कम शक्ति वाले तो पृथ्वी की चुंबकीय शक्ति से खिंचकर ध्रुवीय क्षेत्रों की ओर चले जाते हैं और शेष शक्तिशाली कण पृथ्वी के वायुमंडल में प्रवेश करते हैं। तब वायुमंडल के परमाणु नाभिकों और ब्रह्मांड किरण-नाभिकों में टक्कर होती है। इस संगम-समन्वय से नई जाति के कणों का जन्म होता है। इन्हें मेसोन हाईपरोन ऋण न्यूक्तियोन आदि नामों से जाना जाता है। इतने पर भी इन ब्रह्मांड किरणों का अस्तित्व समाप्त नहीं होता है। ये वायु-नाभिकों से टकराती, नए नाभिकों को जन्म देती हुई पृथ्वी तल तक चली आती हैं। हाँ उनका वह रूप नहीं रहता, जो वायुमंडल में प्रवेश करने से पूर्व था। यहाँ वे बहुत कुछ बदली हुई स्थिति में होती हैं। पृथ्वी पर अब तक १०३ से भी अधिक परमाणु तत्त्वों की खोज की जा चुकी है। इन्हें विनिर्मित, विकसित और गतिशील बनाने में जिस सिंक्रोट्रोन तत्त्व को श्रेय है, वह ब्रह्मांड किरणों की ही प्रतिकृति है। इस एक शब्द में अनंत शक्ति का उद्‌गम कहना चाहिए। जेनेवा में स्थापित प्रोटोन सिंक्रोट्रोन २ अरब इलेक्ट्रोन वाल्ट शक्ति के 'बीम' पैदा कर सकता है। ब्रह्मांड विकिरण के कुछ कण तो इससे भी १० लाख गुने अधिक शक्तिशाली हैं।

ये ब्रह्मांड किरणें कहाँ से आती हैं? इनका उद्‌गम-स्रोत कहाँ है? इसका अन्वेषण करते हुए यह पता लगा है कि इस निखिल

ब्रह्मांड में संव्याप्त कोटि-कोटि तारागणों में कुछ बूढ़े होकर मरते रहते हैं और उनके मरण से नए तारकों का जन्म होता है। ये नए तारे जब अस्तित्व में आते हैं, तब उनकी उग्र ऊर्जा जिस परिधि में बिखरती है, वहाँ उसे ब्रह्मांड किरणों के विकिरण के रूप में अनुभव किया जाता है। वृद्ध तारकों के मरण के अवसर पर अति उच्च तापमान के कारण हीलियम, हाइड्रोजन आदि तत्त्वों की ज्वलन प्रक्रिया से भयंकर विस्फोट होता है और वह तारा टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर जाता है। इस विस्फोट की आभा लगभग एक महीने तक आकाश में दृश्यमान रहती है। यह विस्फोटजन्य पदार्थ नए ढंग से एक नए तारे के रूप में प्रकट होता है। इसे विज्ञानी सुपर नोवा कहते हैं। यह अभिनव तारक का नामकरण 'क्रैव नेवुला' के नाम से प्रख्यात है। तारों की मरण-जन्म प्रक्रिया प्राय: ३०० वर्षों में एक बार देखने को मिलती है। अभिनव तारक का ज्योतिपुंज हमसे लगभग ३००० प्रकाश वर्ष दूर है। इसका व्यास ५ प्रकाश वर्ष है।

अपनी आकाश गंगा में मात्र तारे ही भरे नहीं हैं, उसके मध्याकाश में विरल गैस तथा धूलि से बने हुए ऐसे विशालकाय बादल भी हैं, जो निरंतर विचरण करते रहते हैं। 'क्रैव नेवुला' से निकली हुई ब्रह्मांड किरणें कुछ तो सीधी पृथ्वी पर आती हैं, कुछ इन बादलों से टकराकर बिखर जाती हैं और उनका धरती पर अवतरण सभी दिशाओं में होने लगता है।

धरती के विभिन्न प्रयोजनों में संलग्न, विभिन्न प्रक्रियाओं को संपन्न करने में तत्पर महाशक्ति, धरती की अपनी उपज नहीं है, वह अन्यत्र से आती है। धरती उसका उपयोग भर करती है। उपयोग भी इतना कम जिसे पर्वत की तुलना में राई जितना समझा जा सके। शेष शक्ति तो ऐसी ही बिखरती रहती है और अव्यवहृत हुई फिर किसी अज्ञात दिशा में ही चली जाती है।

सन् १९६९ ई० में ज़ब पहली बार मनुष्य ने चंद्रमा पर अपने चरण रखे, तो लेसर किरणों के बारे में और भी नई जानकारियाँ प्राप्त करने के लिए नए प्रयास किए।

लेसर किरणें और योग-सिद्धि

जब अपोलो-११ के अंतरिक्ष यात्री आर्मस्ट्रांग और एडविन एल्ड्रिन चंद्रमा तल पर उतरे थे, तो वहाँ उन्होंने अनेक यंत्रों के साथ 'लेजर' नामक एक यंत्र भी स्थापित किया था। पाठक बहुत कुछ जानते होंगे कि यह 'लेजर' यंत्र ही है, जो भारतीय योगशास्त्रों में वर्णित सिद्धियों की संभावना को सत्य प्रमाणित करने लगा है। इस यंत्र का जिस दिन पूर्ण ज्ञान हो जाएगा, उस दिन ऊपर दी हुई घटनाओं की तरह वैज्ञानिक भी कहीं भी बैठे-बैठे खेल की तरह चाहे किसी के मन की बात जान लेंगे। एक क्षण में चंद्रमा, मंगल, शुक्र, शनि, यूरेनस, नेपच्यून आदि किसी भी ग्रह की बात जान लिया करेंगे। यही नहीं, भारी-से-भारी बोझ की वस्तुएँ कहीं-से-कहीं पहुँचा दी जाया करेंगी और लोगों को उनका पता भी न चला करेगा। 'लेजर' इस युग का जीता-जागता तिलस्म ही है।

चंद्रमा पर यह इसलिए लगाया गया है कि वहाँ होने वाली किसी भी हलचल को सेकंडों में धरती तक पहुँचा देता है। यहाँ के वैज्ञानिक क्षण भर में मालूम कर लेते हैं कि चंद्रमा में क्या हो रहा है? सन् १९६२ में आविष्कृत इस यंत्र का पहला प्रयोग ९ मई को ८ बजकर ५५ सेकंड पर लेक्सिंग्टन (बोस्टन के पास) में किया गया। अनेक वैज्ञानिक और संभ्रांत व्यक्ति वहाँ एकत्रित थे। जैसे ही प्रो० लुई स्मलिन ने बटन दबाया कि बहुत बारीक धागे के आकार में प्रकाश का रश्मि-समूह (बीम ऑफ रेज) निकली और आकाश को चीरती हुई कुल १३ सेकंड में चंद्रमा पर जा पहुँची। अल्बा टेनियस ज्वालामुखी के पास उसने २ मील का प्रकाश विंब

बना दिया। फिर थोड़ी ही देर में वहाँ से टकराकर वह पुनः वेधशाला में लौट आया।

यह यंत्र चंद्रमा में लग जाने से चंद्रमा और सुदूर ग्रहों की हरकतों की शोध करना ऐसे संभव हो गया है, जैसे हम मकान की किसी ऊँची छत पर बैठकर पास-पड़ोस के लोगों की सब गतिविधियाँ देख लेने की स्थिति में आ जाते हैं। इस यंत्र की शक्ति इतनी भयंकर है कि कठोर-से-कठोर होने पर यदि इसकी एक हलकी-सी ही किरण फेंक दी जाए, तो वह १/२००००००० सेकंड में ही उसे छेदकर रख देगी। इन दिनों अमेरिका में इस पर २००० वैज्ञानिक शोध कर रहे हैं। लगभग ४०० प्रयोगशालाओं में 'लेजर' के विभिन्न उपयोगों पर प्रयोग चल रहे हैं। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि इस यंत्र का विकास करके संसार के किसी भी भाग में बैठे सैनिकों को, उनके हवाई अड्डों और साज-सामान को पल भर में ही नष्ट-भ्रष्ट कर डालना संभव हो जाएगा। अनुमान है कि अमेरिका ने ऐसी एक 'लेजर बंदूक' बना ली है, जिसमें गोली की कोई आवश्यकता नहीं होती, नियंत्रित लेजर किरणें ही यह काम कर देती हैं।

इस शक्ति के उपयोग ध्वंसात्मक ही नहीं है, वरन उसका पूर्ण विकास हो जाने पर उससे अनेक प्रकार के मानवोपयोगी और जीवन में काम आने वाले अद्‌भुत कार्य भी संपन्न किए जा सकेंगे। इस यंत्र की मदद से विश्व के किसी भी भाग में बैठे किसी भी व्यक्ति से वैसी ही बात-चीत करनी संभव हो जाएगी, जैसे कोई योगी दूरस्थ व्यक्ति को अपने संकल्प-बल से ही कोई संदेश पहुँचा देता है। जगद्‌गुरु शंकराचार्य ने अपनी माँ को वचन दिया था कि जब वह मरणासन्न होंगी, अंतिम दर्शनों के लिए हम अवश्य आएँगे। मृत्यु के समय उनकी माँ ने उन्हें स्मरण किया। तब जगद्‌गुरु उत्तर-भारत की यात्रा पर थे, उस समय ऐसे कोई यंत्र टेलीफोन आदि नहीं थे, फिर भी वह उस परावाणी को पकड़ने में सफल हो गए थे और

घर जाकर माँ से मिले व माँ का अंतिम दाह-संस्कार भी अपने हाथों से किया था।

टेलीविजन का स्थान कुछ दिनों में 'लेजर' ले सकता है, तब कोई भी व्यक्ति संजय की तरह चलता-फिरता कहीं के भी दृश्य देख सकेगा और यह सिद्ध हो जाएगा कि योगियों की तीसरे नेत्र की कल्पना गल्प नहीं हैं। भूमध्य में अवस्थित-प्राणचक्र उसी का दूसरा रूप है, जिसके द्वारा मन संसार में कहीं भी हो रहे युद्ध भी देख व नृत्य, गीत और सार्वजनिक आयोजनों का बिना टिकट आनंद भी ले सकता है।

'लेजर' का सिद्धांत 'मन के द्वारा चमत्कार' के सिद्धांत के समानांतर ही है। 'लेजर' अंग्रेजी के 'लाइट एंप्लिफिकेशन बाईस्टिम्यूलेटेड एमिशन ऑफ रेडिएशन' से निकाला गया संक्षिप्त नाम है। उसका अर्थ होता है—'विश्वव्यापी विकिरण शक्ति को उत्तेजित करके एक बिंदु से प्रकाश के रूप में ढाल देना' अर्थात आकाश में फैले हुए प्राकृतिक परमाणुओं की शक्ति सामान्यत: इधर-उधर अस्त-व्यस्त और बिखरी हुई होती है। उसे रेडिप्लैटिनम धातु की छड़, हीलियम या क्रिप्टान गैस के माध्यम से प्रवाहित होने को विवश कर दिया जाता है, जिससे अनंत आकाश में भरी परमाणु शक्ति काम करने लगती है। जो लोग परमाणुओं की इस शक्ति से परिचित हैं, वे अनुमान कर सकते हैं कि इन लाखों परमाणुओं का उपयोग करने वाले यंत्र की क्षमता कितनी अधिक भयंकर और वीभत्स होगी। अमेरिकी वैज्ञानिक और वायुसेना के प्रधान जनरल श्री कर्टिस ई० लीमे ने ठीक ही कहा है कि 'लेजर' किसी महाद्वीप के प्रक्षेपणास्त्रों को भी क्षण भर में नष्ट-भ्रष्ट करके रख डालने की सामर्थ्य रखता है। फिलोडेल्फिया के फ्रैंकफोर्ड शस्त्र निर्माण फैक्टरी में बन रहे यंत्र इस बात के प्रमाण हैं। अनुमान है कि इन यंत्रों का

निशाना कभी चूकेगा नहीं और एक सेकंड में १८६००० मील तक के व्यक्ति को भी धराशायी कर देगा।

लेजर यंत्र की कल्पना सर्वप्रथम १९५१ में डा० चार्ल्स टाउन्स ने की थी। उन्होंने सोचा आकाश में कितनी गैसें भरी पड़ी हैं, वे इधर-उधर चक्कर काटती रहती हैं। इन व्यूहाणुओं को यदि किसी यंत्र द्वारा ऊर्जा में बदला जा सके, तो उस शक्ति का पारावार न रहे। इसी कल्पना ने 'लेजर' यंत्र को जन्म दिया।

मन भी हीलियम या क्रिप्टान गैस जैसी ही सूक्ष्म शक्ति या क्रिस्टल है। भारतीय तत्त्वदर्शन के अनुसार अन्न की सूक्ष्मातिसूक्ष्म अवस्था ही मन है। अन्न से शरीर में रस बनता है फिर क्रमशः रक्त, मांस, मज्जा, मेदा, अस्थि और वीर्य बनते हैं। यही वीर्य बाद में अंतःकरण चतुष्टय—मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार में बदलता है। तात्पर्य यह है कि मन भी एक प्रकार का सूक्ष्म पदार्थ ही है। प्रकाश संश्लेषण 'फोटोसंथेसिस' के लेख में पाठकों ने पढ़ा होगा कि वृक्षों के विकास में ९५ प्रतिशत भाग सूर्य किरणों का है, जो फल या अन्न में भी सोखा (आब्जर्व) जाता है। शरीर एक ऐसा यंत्र है, जो इन प्रकाश कणों को फिर एक स्थान पर ला देता है, उसे ही मन कहते हैं। इस तरह मन प्रकाश या सूर्य की तरह एक शक्ति और पदार्थ ही है।

जर्मन विद्वान हेकल की पुस्तक विश्व की समस्या (दि राइडिल ऑफ यूनीवर्स) के उत्तर में डा० जाल ने लिखा है कि 'हेकल भी यह मानते हैं की प्रकृति (मैटर) और शक्ति (फोर्स) का अभाव नहीं हो सकता। वे किसी-न-किसी रूप में बने रहते हैं। इसे उन्होंने 'विश्वव्यापक नियम' (यूनिवर्स लॉ) या 'सृष्टि का मौलिक नियम' (फंडामेंटल कास्मिक लॉ) कहा है। इसी प्रकार प्राण (लाइफ), मन (माइंड) और अहंकार (कांससनेस) भी अलग-अलग पदार्थ हैं। विज्ञान ने अभी तक इन्हें शक्ति नहीं माना है, पर मेरा सिद्धांत

है कि प्राण आकाश में रहता है और मन उसका उच्चतर विकास है, वे सब आकाश में स्थित हैं और पदार्थ की शक्ति का नियंत्रण कर सकते हैं।

ये बातें यद्यपि बहुत सूक्ष्म विचार की हैं तथापि इस बात से संदेह रहित है कि इनका प्रयोग किसी भी शक्ति की तरह हो सकता है। भारतीय योगी इस बात के प्रमाण हैं। एक दिन आएगा, जब लोग अनुभव करेंगे कि वस्तुत: मन की सामर्थ्य लेजर की सामर्थ्य से अधिक है। उसके विकास से अनेक चमत्कार जैसे लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं और दूसरों को भी लाभान्वित किया जा सकता है।

सूक्ष्म तरंगों की अपार शक्ति

विज्ञान की आकाश में गहरी रुचि और अध्ययन अनुसंधान जिन रहस्यमय तथ्यों का उद्‌घाटन कर रहे हैं, वे भारतीय तत्त्वदर्शन के निष्कर्षों को ही पुष्ट कर रहे हैं। बीसवीं शताब्दी के पहले तक भौतिक विज्ञान भारतीय तत्त्वदर्शन की वैदिक काल से चली आ रही इस मान्यता का उपहास उड़ाता था कि आकाश पोला नहीं है, बल्कि हमारे शरीर की और पृथ्वी की संरचना में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है तथा वह ईश्वरीय चेतना के सर्वाधिक निकट है।

सर्वप्रथम बीसवीं सदी की शुरुआत में यानी १९०१ में रेडियो संसार के अन्वेषक मारकोनी द्वारा रेडियो तरंगों की खोज और प्रमाणों द्वारा उसकी पुष्टि से ही वैज्ञानिकों ने जाना कि वायुमंडल के अतिरिक्त भी कुछ शक्ति तरंगें विद्यमान हैं। अब विज्ञान अपना बचपन पूरा कर किशोर हो चुका है और तरुणाई का दिन आने की प्रतीक्षा की जा रही है।

इधर वैज्ञानिकों का ध्यान तेजी से आकाश की गहराइयों की ओर गया है। ब्रह्मांडीय किरणों तथा आकाश के उच्च ऊर्जा संपन्न व अदृश्य गुणों वाले सूक्ष्म कणों के अध्ययन से प्रकृति के गूढ़तम रहस्यों के उद्‌घाटन की संभावना है। इससे

माइक्रोकास्म के गुणों की जानकारियाँ मिल सकेंगी तथा गैलेक्सी में एवं संपूर्ण ब्रह्मांड में चल रही कई रहस्यमय गतिविधियों को समझा जा सकेगा।

भौतिकविद् प्राथमिक कणों की लगातार खोज कर रहे हैं, क्योंकि उनकी मान्यता है कि प्राथमिक कणों के गुण-धर्मों के बोध से ही विश्व की उत्पत्ति तथा विकासक्रम को समझा जा सकेगा। प्राथमिक कणों का अर्थ है, द्रव्य की वह सबसे छोटी इकाई या वह मूल कण, जिसमें सभी बड़ी इकाइयों का संयोजन हो चुका है। स्पष्ट है कि प्राथमिक कण केवल कोई एक विशेष कण ही हो सकते हैं, पर इस अर्थ में अभी तक किसी प्राथमिक कण की खोज नहीं की जा सकी है। इसलिए अभी तो भौतिकवेत्ता प्रोटान, न्यूट्रान आदि सौ से भी अधिक कणों को प्राथमिक कण कहते हैं।

बीसवीं सदी के प्रारंभ में द्रव्य की सबसे छोटी इकाई परमाणु (एटम) को माना जाता था। जो एक इंच के २० करोड़वें भाग के बराबर होते हैं। ये भी कई प्रकार के थे, प्रत्येक तत्त्व के पृथक-पृथक परमाणु। इनमें सर्वाधिक सरल परमाणु हाइड्रोजन तत्त्व का है, जिसके नाभिक में एक प्रोटान होता है और एक इलेक्ट्रान उसकी परिक्रमा करता है। अन्य तत्त्वों में केंद्रक में प्रोटान तथा न्यूट्रान होते हैं और इलेक्ट्रान उनके चक्कर काटता है। परमाणु के विखंडन द्वारा प्रोटान, इलेक्ट्रान का पता लगते ही यह तो स्पष्ट हो ही गया कि परमाणु प्राथमिक कण नहीं है।

न्यूट्रान की खोज होने पर ही परमाणु-ऊर्जा और परमाणु-बम दोनों बने। 'न्यूट्रान-भौतिकी' नामक नई विज्ञान शाखा चल पड़ी।

इधर वैज्ञानिक अन्वेषणों से ज्ञात हुआ कि परमाणु सूक्ष्म विश्व में प्रत्येक कण का एक प्रतिकण विद्यमान है। ऐसे ऋणावेशी कण इलेक्ट्रान हैं, तो उसका विरोधी, धनावेशी कण है—पोजिट्रान। उसी तरह प्रत्येक कण का एक प्रतिकण है।

कण और प्रतिकण जब परस्पर पास आते हैं, तो विस्फोट होता है और ऊर्जा का उत्सर्जन होता है।

इस ऊर्जा की इकाई है—इलेक्ट्रान वोल्ट। किसी वस्तु को पेंसिल की नोंक से हलके से टक-टक करने से उस वस्तु के परमाणु को एक इलेक्ट्रानिक वोल्ट ऊर्जा मिल जाएगी, पर इस ऊर्जा से परमाणु में कोई गति या चंचलता नहीं आ सकेगी। एक हजार से दस हजार तक इलेक्ट्रान-वोल्ट ऊर्जा पाकर परमाणु के इलेक्ट्रान चंचल हो उठते हैं। इसी से रासायनिक द्रव्यों का संयोजन होता है, पर परमाणु का नाभिक अभी भी गतिशील नहीं होता। वह एक लाख से सौ लाख इलेक्ट्रान-वोल्ट ऊर्जा से ही गतिशील होता है।

लाखों रुपयों की लागत से साइक्लोट्रोन आदि विशेष प्रकार के त्वरण यंत्र बनाए जाते हैं, जो प्रोटान आदि कणों को करोड़ों, अरबों इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा प्रदान करते हैं। प्रोटान धनावेशी कण हैं, ऋणावेशी इलेक्ट्रान इनका चक्कर काटते हैं।

जब न्यूट्रान का वीटा-विखण्डन होता है, तब प्रोटान, इलेक्ट्रान तथा न्यूट्रान—ये तीन कण उत्सर्जित होते हैं। वैज्ञानिक इस दिशा में तेजी से काफी काम कर रहे हैं, किंतु प्राथमिक कणों की खोज अभी भी जारी है। अभी तक सात प्राथमिक कणों को वैज्ञानिकों ने कुछ वर्गों में बाँट दिया है—जैसे लेप्ट्रोन, मेसोन, बोरिओन आदि। इनमें से फोटोन, न्यूट्रान और पोजिट्रान स्थायी कण हैं। शेष अस्थायी कण हैं। फोटोन तथा न्यूट्रान का स्थिर द्रव्यमान शून्य है। इलेक्ट्रान और पोजिट्रोन का एक स्थिर द्रव्यमान है। प्रोटान का द्रव्यमान १८३६ तथा न्यूट्रान का १८३८ है।

न्यूट्रान का स्थिर द्रव्यमान शून्य है, इसका तात्पर्य यह है कि स्थिर न्यूट्रिनो नाम की कोई वस्तु नहीं। न्यूट्रान कण जन्म के साथ ही प्रकाश की गति से यानी तीन लाख किलोमीटर प्रति सेकंड के

वेग से दौड़ने लगते हैं। ये न्यूट्रान अन्य द्रव्य कणों के साथ बहुत मंद परस्पर क्रिया दरसाते हैं। इसीलिए ये अन्य द्रव्य कणों से सामान्यतः टकराते नहीं। अतः न्यूट्रिनो, पृथ्वी पिंड से आर-पार हो जाते हैं। यहाँ तक कि सूर्य में से भी आर-पार हो सकते हैं। इन न्यूट्रिनों के भी प्रतिकण विद्यमान हैं, जिन्हें प्रतिन्यूट्रिनो कहते हैं।

खोजों से यह भी पता चला है कि आकाश में विद्युत कणों की अनेक परतों को अयनमंडल (आइनोस्फियर) कहते हैं। हमारी पृथ्वी आकाश में स्थित है। अयनमंडल पृथ्वी को सभी ओर से घेरे हुए हैं। विद्युत कणों की इन अनेक परतों में तीन मुख्य हैं। एयल्टन ने इन्हें 'ई', 'एफ' और 'डी' परतें कहा है।

धरती की ऊँचाई पर कम वायुमंडलीय दबाव वाले क्षेत्र में अणु-परमाणु अपना ऋणाणु (इलेक्ट्रान) खो देते हैं। सूर्य इलेक्ट्रानों को तोड़ता है। यह क्रिया जितनी तीव्र होती है, अयनमंडल उतनी ही तीव्रता से पृथ्वी में मौसम आदि का नियंत्रण करता है। साथ ही अयनमंडल लोगों के मन, हृदय और गुणों को भी प्रभावित करता है। इलेक्ट्रान से तोड़ लिए जाने के बाद अणु-परमाणुओं में केंद्रक शक्ति शेष रहती है। अयनमंडल में विद्यमान यह केंद्रक शक्ति ही लोगों के गुणों को, मन और हृदय को प्रभावित करती है। इससे पता चलता है कि केंद्रक कोई मनोमय शक्ति है, मात्र भौतिक शक्ति नहीं।

पृथ्वी की ओर नीचे आने पर इन कणों की शक्ति घट जाती है। जैसे-जैसे वायुमंडलीय दबाव पड़ता है, अयनमंडलीय दबाव घटता है, क्योंकि पृथ्वी तक आते-आते उन कणों में धूलि कण व गैसों के कण मिल जाते हैं। अधिक ऊँचाई पर अधिक स्वच्छ वायु ही स्वास्थ्य को पुष्ट नहीं करती, प्रत्युत, मनोमय शक्ति वाले तथा अत्युच्च ऊर्जा वाले ये प्रकाश कण चित्त को प्रसन्नता, स्फूर्ति व शक्ति देते हैं। इस प्रकार ऊँचे

स्थानों पर उत्तम स्वास्थ्य का शुद्ध वायु से भी बड़ा कारण ये सूक्ष्म कण होते हैं। 'फोटोन' की विलक्षण कर्तृत्व शक्ति ज्ञात हो चुकी है। फोटोन तथा न्यूट्रिनो दोनों निरंतर गतिशील रहते हैं। इनके प्रतिकणों के भी गुण, धर्म जाने जा सकें, तो कई नए रहस्य सामने आएँगे। इसीलिए इसी दिशा में तेजी से वैज्ञानिकगण अन्वेषण कर रहे हैं, क्योंकि अनुमान है कि विश्व की उत्पत्ति व विकास-विस्तार में न्यूट्रिनो एवं प्रतिन्यूट्रिनो कणों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। स्मरणीय है कि कुछ ही वर्षों पूर्व रूसी और अमेरिकी वैज्ञानिकों की खोजों से पता चला कि प्रकृति में अत्युच्च ऊर्जा वाले कण विद्यमान हैं।

एक एक्सीलरेटर से दस लाख इलेक्ट्रान वोल्ट तक की ऊर्जा के कण उत्पन्न किए जा सकते हैं। इसी क्रम में साइक्लोट्रान और वीटाट्रान का निर्माण हुआ है, जिनसे डेढ़ करोड़ इलेक्ट्रान वोल्ट की ऊर्जा वाले कण उत्पन्न किए जा सकते हैं। इतनी शक्ति से विशाल अंतरिक्षयानों को ढोया और सुदूर नक्षत्रों तक पहुँचाया जा सकता है, पर प्रकृति के ऊर्जा कणों की शक्ति तो इससे बहुत अधिक है। आकाश की 'कास्मिक' किरणों में मेसान, हायपरान आदि अस्थिर कण हैं, जिनमें प्रचंड ऊर्जा है।

'गैलेक्सी' के केंद्रीय क्षेत्र में सूर्य जैसे प्राय: १० खरब नक्षत्र पुंज हैं। अब तक इस क्षेत्र में ज्ञात कुल तारों की संख्या दस घात चौबीस है। यह संपूर्ण विस्तार ही गैलेक्सी कहलाता है।

ज्योतिषी भौतिकीविदों (एस्ट्रा फिजिसिस्ट्स) के अनुसार इस केंद्रीय क्षेत्र में कणों का विघटन तेजी से होता है। तारों से अदृश्य कण निकलकर प्लाज्मा के रूप में पोले दीखने वाले आकाशीय क्षेत्र में फैल जाते हैं। इनके इस फैलाव से ही विद्युत चुंबकीय क्षेत्र तथा गुरुत्वाकर्षण आदि की क्रियाएँ संपन्न होती हैं। ऐसे फैले हुए प्लाज्मा को आयनीकृत प्लाज्मा (आइनोस्फेरिक

प्लाज्मा) कहते हैं। आइनोस्फेरिक प्लाज्मा द्वारा कई तरह के क्षेत्र बनते हैं। आइनोस्फेरिक प्लाज्मा के रूप में फैले ये कण ही विभिन्न विचारों, प्रक्रियाओं, घटनाओं, दृश्यों वाले हलचल पूर्ण जगत का कारण हैं तथा उसे प्रभावित-नियंत्रित करते हैं। लाखों वर्षों से आवारागर्दी करते-करते ये कण भूल ही गए हैं कि वे कहाँ से आए हैं ?

ये भूले हुए कण ही कास्मिक कणों के रूप में पृथ्वी की ओर भी आते रहते हैं। इन कणों में उच्च गति वाले प्रोटान तथा कई तत्त्वों के परमाणु होते हैं, इनमें अत्यधिक ऊर्जा होती है। वायुमंडल में इनके प्रवेश करते ही हलचल मच जाती है। इसी हलचल से एक्सटेन्डेड एयर शावर्स (फैले हुए वायु-शावरों) का निर्माण होता है। पृथ्वी की स्थूल हलचल इस प्रकार इन अनेक स्वभाव तथा गुणों वाले कणों के कारण ही होती है।

विचार तरंगें पैदा करने वाले आकाशस्थ कण अति सूक्ष्म होते हैं। इनका जीवनकाल सेकंड का भी अत्यल्प अंश ही होता है उनका उद्‌भव और विनाश अनुमान में भी नहीं आ पाता। ये कण धन तथा ऋण दोनों आवेशों वाले होते हैं।

विचार तरंग पैदा करने वाले अत्युच्च ऊर्जा संपन्न कणों का संचय ध्यान-धारणा द्वारा संभव है। जिस देवशक्ति (चेतन शक्ति) की ध्यान-धारणा करेंगे, उसी प्रकार की क्षमताओं वाले सूक्ष्म ऊर्जस्वित कण व्यक्तित्व में संचित हो जाएँगे। इस तरह जो शक्तियाँ जितनी बलवान होती हैं, वे अपने उपासक को उतनी ही अधिक सिद्धि व सामर्थ्य दे पाती हैं। ये चित्-शक्तियाँ वस्तुतः नाभिकीय चेतनाएँ (न्यूक्लियर एक्टिविटीज) हैं। इनका कारण क्यू-मेसान, न्यूट्रिनो और पाई-मेसान जैसे अत्यंत सूक्ष्म कणों में से कोई भी हो सकते हैं। इन कणों तथा नाभिकीय-चेतनाओं पर गैलेक्सी के चुंबकीय क्षेत्र भी प्रभाव नहीं डाल सकते हैं।

मुंबई (बंबई) के टाटा इंस्टीट्यूट के प्रख्यात वैज्ञानिक डा० प्राइस की खोजों से प्राप्त निष्कर्षों के अनुसार ये ऊर्जस्वित कण तथा ब्रह्मांडीय किरणें जब ठोस पदार्थों से गुजरती हैं, तो उन पर अपना प्रभाव छोड़ जाती हैं। इस प्रभाव को सूक्ष्मदर्शी यंत्रों से देखा-परखा जा सकता है। जड़ पदार्थों में करोड़ों वर्ष पूर्व का इन चेतन किरणों का प्रभाव अभी भी विद्यमान है। इसका अर्थ है कि इन चेतन किरणों के अध्ययन, विश्लेषण तथा उनसे संपर्क की विधि ज्ञात हो गई, तो ब्रह्मांड में अतीत में घटित, वर्तमान में घट रही या कि भविष्य में करोड़ों वर्षों तक घटित होने वाली घटनाओं का दृश्य देखा-जाना जा सकता है। इन ब्रह्मांडीय किरणों के वर्ग भी अधिक नहीं हैं।

'काल' तत्त्व की गंभीर विवेचन डब्ल्यू० एच० डन ने अपने ग्रंथ 'एक्सपेरीमेंट विद टाइम' में बताया है कि आमतौर से मनुष्य की चेतना समय के उस छोटे-से केंद्र पर जुड़ी रहती है, जिसे वर्तमान कहते हैं। बंधन की इसी जकड़न के कारण मन से इतना ही बन पड़ता है कि वह वर्तमान की समस्याओं और अनुभूतियों के क्षेत्र में अपनी हलचलें केंद्रित रखे, किंतु ऐसी भी स्थिति प्राप्त की जा सकती है, जब चेतना को वर्तमान के बंधन शिथिल करने का अवसर मिल जाए। गहरी सुषुप्ति भी ऐसी स्थिति हो सकती है। उस स्थिति में समय के अन्य दो आयाम भूत और भविष्य भी उसी तरह अनुभव की परिधि में आ सकते हैं, जिस तरह कि आमतौर से वर्तमान अनुभव में आता है। इसी प्रकार एअर शावर्स (वायु शावरों) में लाखों, करोड़ों अत्युच्च ऊर्जा संपन्न कण हैं जिनकी हजारवें हिस्से की शक्ति ही विशाल अंतरिक्षयानों को किसी भी ग्रह-नक्षत्र तक पहुँचाने में समर्थ है।

वायु शावरों के अध्ययन से पता चला कि उनमें इलेक्ट्रान और पाजिट्रान कण भी सम्मिलित हैं। कास्मिक किरणों के वायुमंडल में

पहुँचने से विभिन्न भौतिक पदार्थों की रचना होती है। इन भौतिक पदार्थों की मानसिक क्रियाएँ भी अब अध्ययन का विषय है। वैज्ञानिकों को विश्वास है कि सृष्टि के आविर्भाव काल से अब तक ब्रह्मांड के विस्तार के मूल तत्त्व इन स्थूल भौतिक पदार्थों में बीज रूप में विद्यमान हैं। उनका अध्ययन अनेक क्रियाएँ उद्‌घाटित करेगा तथा असंख्य रहस्यों का भेदन करेगा।

विचारों की तरंगें वही तत्त्व पैदा करते हैं, जिस दिन तथ्य का उद्‌घाटन होगा कि विचार तरंगें आकस्मिक नहीं पैदा हो जातीं, बल्कि वे गणितीय नियमों के अनुसार तथा संकल्प के कारण नि:सृत तथा विस्तृत होती हैं, उस दिन ब्रह्मांड व्यापी चेतन शक्तियों की भी जानकारी जो जाएगी तथा उन चेतन शक्तियों से मानसिक संपर्क की जरूरत महसूस होगी, क्योंकि इस मानसिक संपर्क से अनेक प्रकार की उपलब्धियाँ संभव हैं। इन चेतन शक्तियों को ही देवगण तथा उनके समन्वय को ईश्वर कहा जाता है।

यह तो बताया ही जा चुका है कि अपनी आकाश गंगा में मात्र तारे ही नहीं भरे हुए हैं, बल्कि इसके मध्य आकाश में गैस और धूलि से बने ऐसे विशालकाय बादल भी हैं, जो निरंतर विचरण करते रहते हैं और सौर नेवला से निकलकर पृथ्वी तक पहुँचने वाली ब्रह्मांड किरणें धरती के विभिन्न प्रयोजनों को पूरा करती हैं। जिन किरणों का उपयोग नहीं होता, वे अस्त-व्यस्त हो जाती हैं।

मनुष्य के पास भी अज्ञात और सूक्ष्म लोक से इस तरह की कितनी ही शक्तियाँ पहुँचती तथा अपने सदुपयोग के लिए आकुल-व्याकुल होती रहती हैं। यदि उनका सदुपयोग नहीं किया, तो वे ऐसे ही अस्त-व्यस्त होकर बिखर जाती हैं या नष्ट हो जाती हैं।

शक्ति की तनिक-सी उपलब्धि होने पर हम मदोन्मत्त हो जाते हैं। अच्छा स्वास्थ्य, चमकता-सा रंग, रूप, तेज मस्तिष्क, मुट्‌ठी भर पैसा, तनिक-सी सत्ता, प्रशंसा पाकर हम अहंकार में ऐंठे-ऐंठे फिरते

हैं और समझते हैं, न जाने क्या पा लिया और क्या बन गए? यह अहंवृत्ति अपने आपको और विराट विश्व के स्वरूप को न जानने के कारण है।

शक्ति के उद्‌गम पर यदि हम विचार करें, तो पृथ्वी को समस्त हलचलों को प्रेरित करने वाली अंतरिक्ष से अवतरित होने वाली ऊष्मा पर ध्यान जाता है। प्रकाश की महत्ता को समझने का प्रयत्न करते हुए उनसे बड़ी शक्ति धारा सामने आ जाती है। ब्रह्मांड किरणें कितनी अद्‌भुत, कितनी भयंकर और कितनी उग्र हैं, इसकी थोड़ी-सी झाँकी मिलते ही लगता है इस धरती को घेरे हुए महाशक्ति का समुद्र लहरा रहा है और उसमें हम मानव प्राणी मच्छरों की तरह अपना जीवनयापन कर रहे हैं।

शक्तिमान की महाशक्ति की तनिक-सी झाँकी ब्रह्मांड किरणों में होती है। उनकी भी प्रेरक सत्ता मौजूद है। धरती उसी शक्ति के हाथों का एक नन्हा-सा खिलौना है और हम सब हैं उस खिलौने से चिपके हुए रजकण। अपनी तुच्छ उपलब्धियों पर अहंकार करना वस्तुतः शक्ति के विराट स्वरूप को न समझने के कारण ही होता है। यथार्थता को यदि समझ सकें, तो अपने नगण्य से अस्तित्व को समझकर विनयावनत होकर रहें।

यह तो भौतिक जगत में संव्याप्त एक भौतिक शक्ति किरण भर की बात हुई। ऐसी अनेक धाराएँ आकाश में भरी पड़ी हैं और वैज्ञानिक उनकी संभावनाओं तथा उपलब्धियों की पूर्व कल्पना करके यह आशा करते हैं कि अगली शताब्दी में मनुष्य के पास इतनी असीम शक्ति होगी कि वह परमात्मा के साधारण क्रम प्रवाह को इच्छानुसार पलट सके। परमात्मा ने मनुष्य के लिए इतनी अच्छी, सुविधाजनक और सुगम व्यवस्थाएँ कर रखी हैं, जिनमें से अधिकांश का उसे कोई परिचय नहीं है, फिर भी मनुष्य अपनी सीमित सामर्थ्य और स्वरूप क्षमता को लेकर ही इस प्रकार इठलाता है जैसे वही इस सृष्टि का सिरमौर, नियामक और सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। ▭

क्षुद्र-ग्रह चले बड़े इठलाते

बच गए हम-आप अन्यथा जून १९६८ में ही अंतरिक्ष से दौड़ता हुआ आने वाला इकारस सारे पृथ्वीवासियों को एक क्षण में ही कुचलकर रख देता। पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण से थोड़ा दूर रह जाने के कारण वह क्षुद्रग्रह अंतरिक्ष में ही कहीं विलीन हो गया, फिर यदि वह पृथ्वी से टकरा जाता तो सैकड़ों हाइड्रोजन बमों की क्षमता वाली ऊर्जा पैदा करता। उससे पृथ्वी में भूचाल आ जाता, समुद्र उफनकर पहाड़ों तक को डुबोकर रख देता, हजारों उद्योगों को प्रश्रय देने वाले नगरों के अस्तित्व का भी पता न चलता। संदेह है कि तब तक मानवप्राणी पृथ्वी पर शेष रहता भी अथवा उसका भी अंत हो जाता।

तेतालीस वर्ष पूर्व १९३७ में एक बार ऐसा ही तहलका मचा था। तब इकारस का ही एक दूसरा भाई हर्मेस अपनी आँखें लाल करके दौड़ा था। खगोलशास्त्रियों ने निश्चित आशंका व्यक्त की थी कि वह भी पृथ्वी से टकरा सकता है। यदि तब वह घटना घटित हो गई होती, तो आज पृथ्वी की कुल आबादी एक और दस हजार के बीच होती। एक नए इतिहास की प्रस्तावना इन दिनों चल रही होती। पर बेचारा हर्मेस पृथ्वी से पाँच लाख मील पास तक ही आया और जब उसने देखा कि पृथ्वीवासी बहुत डर गए, तो उसे भी दया आ गई और उसने अपना मार्ग बदल दिया। पृथ्वीवासियों ने संतोष की साँस ली।

जो वैज्ञानिक गणित के लंबे-लंबे सूत्र हल कर यह जान लेते हैं कि अंतरिक्ष यान को इस गति से अमुक दिशा की ओर इतने डिगरी कोण (बियरिंग) पर प्रक्षेपित किया जाए, तो वह उतने समय में चंद्र, शुक्र या मंगल पर पहुँच जाएगा। गणित के नियंत्रण से वह

स्थान (ग्रिड रिफरेन्स) तक जान लेते हैं, जहाँ चंद्रमा को उतारा जा सकता है। वही वैज्ञानिक इकारस और हर्मेस जैसे ग्रहों के पृथ्वी से टकराने की भी भविष्यवाणी करते हैं और वह गलत हो जाती है, तो लगता है कि विराट जगत में गणित ही सब कुछ नहीं, कोई सर्वशक्तिमान सत्ता भी काम कर रही है, जो गणित को फेल करके अपनी इच्छानुसार बरत सकती है। उसका इस प्रकार क्षुद्रग्रह भेजकर लोगों को डराना तो उसका मनोविनोद मात्र लगता है। जिस प्रकार माता-पिता बच्चे को किसी असहाय स्थिति में छोड़कर उसकी दीनता का आनंद लिया करते हैं, उसी प्रकार भगवान भी अपने मनोविनोद और लोकवासियों को सीख देने का एक मिला-जुला कार्यक्रम इन क्षुद्र ग्रहों के द्वारा रखता रहता है।

उसकी यह मनोरंजक दुनिया भी बड़ी विलक्षण है। १९३२ ई० में भी एक नन्हा-सा ग्रह भटककर पृथ्वी से ६५ लाख मील की दूरी तक चला आया था, तब तक खगोलशास्त्रियों को यह अनुमान था कि इस तरह के क्षुद्रग्रह अंतरिक्ष में दो-चार ही होंगे। अनुमान था कि कोई ग्रह भटक गया होगा और उसके उपखंड ठीक उसी प्रकार अंतरिक्ष में संतरण करने लगे होंगे, जिस प्रकार प्लूटो एक दिन नेपच्यून से अलग होकर एक स्वतंत्र ग्रह ही बन गया। प्लूटो का व्यास तो पृथ्वी के व्यास से लगभग तीन गुना है, पर अंतरिक्ष के ये क्षुद्रग्रह, जिन्हें वर्तमान वैज्ञानिक भाषा में 'अंतरिक्ष कीट' कहा जाता है, बहुत ही छोटे आकार के होते हैं।

प्रसिद्ध ब्रिटिश खगोलशास्त्री पैट्रिक मूर के अनुसार इन क्षुद्र-ग्रहों में 'सीरीस' ४८० मील व्यास,'पालास' ३०६ मील, २४१ मील व्यास का 'वेस्टा' और १२१ मील व्यास का 'जूनों' ये सबसे बड़े क्षुद्रग्रह हैं। लगभग २०० ग्रह कुल २५ से ६० मील व्यास वाले और कोई १९० क्षुद्रग्रह तो १० से २५ मील व्यास के ही होंगे। एक ऐसा ग्रह भी मिला है, जिसका व्यास कुल ३ मील का ही है। इसमें

मनुष्यों को बसाना संभव हो, तो अधिक-से-अधिक ५० हजार आदमी ही उसमें समा सकेंगे। उनके लिए खेती या उद्योगों की समस्या तब भी बनी रहेगी कि उसके लिए स्थान कहाँ से लाएँ? मंगल और बृहस्पति के बीच पाए जाने वाले इन समस्त ग्रहों को जोड़ा जा सके, तो भी वह पृथ्वी से काफी छोटे रहेंगे, किंतु उनकी स्थिति न केवल अंतरिक्ष यानों के लिए खतरनाक है, वरन उनके किसी भी ग्रह से टकरा जाने का भय हर घड़ी विद्यमान रहता है। यह आवश्यक नहीं कि वे केवल पृथ्वी से टकराएँ तभी हमारी हानि हो। सच बात यह है कि यदि इनमें से कोई भी क्षुद्रग्रह किसी भी ग्रह से टक्कर खा जाएँ, तो अंतरिक्ष से लेकर पृथ्वी तक में प्रलयंकारी दृश्य उपस्थित हो सकते हैं। ऐसा लगता है कि प्रलय की शुरुआत इन 'कीट ग्रहों' से ही होती होगी।

यह अनुमान निराधार नहीं है, क्योंकि इनकी कोई स्वतंत्र कक्षाएँ नहीं हैं। यह तो सूर्य की कृपा है, जो इन्हें अपने आकर्षण में बाँधे हुए है। वेस्टा जो इनमें सबसे चमकीला है और जो पृथ्वी से लगभग २२ करोड़ मील दूर है, वह सूर्य की परिक्रमा करता है और ३.६ वर्ष में उसकी परिक्रमा पूरी कर लेता है। अपनी धुरी पर भी वह १० घंटे ४५ मिनट की परिक्रमा पूरी कर लेता है, पर इनकी इस नियमितता का कोई दावा नहीं है। अधिकांश क्षुद्रग्रह स्वच्छंद शैलानी हैं, कहीं घूमते रहते हैं। उदाहरणार्थ 'इकोरस' भी सूर्य और बुध के भयंकर गरमी वाले क्षेत्र में आनंदपूर्वक घूमता रहता है। अभी कुछ समय पूर्व तो उसने यहाँ के लोगों की नींद हराम कर दी थी। ईरोस पृथ्वी के निकट तक आ जाता है और ९४४ नंबर वाले हाइडाल्गों तो कभी-कभी शनि के ग्रह पथ को भी पार कर दूसरे क्षेत्र में निकल जाता है। अब ५० हजार के लगभग ऐसे छोटे-छोटे कीट ग्रह खोजे गए हैं, जिनकी बनावट, चाल-ढाल में बड़ी विलक्षणताएँ हैं।

छोटे और सूर्य के समीप होने के कारण इनकी तमाम हाइड्रोजन गैसें और पानी आदि उड़कर कहीं जाकर सूख गया होगा। इनका यदि कुछ उपयोग हो सकता है, तो इतना ही कि अंतरिक्ष जाने वाले यात्री कभी इनसे स्टेशन का काम ले सकें। संभव है कि इन्हें इन्हीं ग्रहों की नियमित कक्षाओं में प्रस्थापित करने का भी प्रयत्न किया जाए। अनुमान है कि इनमें धातुएँ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो सकती हैं, इसलिए कुछ दिन में ही अंतरिक्ष क्रेन भेजी जा सकती है और उनसे इन्हें पकड़कर पृथ्वी में लाने का प्रयत्न किया जा सकता है, पर ऐसा करने में राक्षसी शक्ति की आवश्यकता होगी। गुरुत्वाकर्षण के अभाव के कारण वहाँ जहाजों को सुविधापूर्वक उतारा जाना और वहाँ से ताजा उड़ानें भरना भी संभव हो सकता है, पर यह सब खिलवाड़ यदि गणितीय व्यवस्था को भी भंग कर देगी, तो वर्तमान अंतरिक्ष यात्रा सुविधाएँ बढ़ाने के स्थान पर विश्वविनाश का भी कारण बन सकती है।

भगवान ने इन अनियमित क्षुद्र ग्रहों को लगता है बेकार नहीं बनाया। उन्हें वह अपनी नाराजगी प्रकट करने के अस्त्र के रूप में भी प्रयुक्त कर सकता है, यह कल्पना विवादास्पद नहीं है। सन् १९६२ ई० के 'अष्टग्रहयोग' से संभव है बचाव के कुछ साधन हों। भगवान इतने बड़े अनिष्ट को अच्छा न समझकर उसे टाल देता हो, पर सबक देने के लिए उसने कई बार पृथ्वी को ऐसे दंड दिए हैं, जो ग्रहयोग ही कहे जा सकते हैं। उदाहरणार्थ अभी कुछ समय पहले कनाडा के म्यूषेक प्रांत में एक ऐसा ही क्षुद्रग्रह पृथ्वी से आ टकराया था। उससे वहाँ ११५०० फुट लंबा और १३०० फुट गहरा गड्ढा बन गया था। डा० फ्रैड चब ने उसका विस्तृत अध्ययन करने बाद बताया—यह उल्का लगभग एक मील व्यास की थी और जब वह पृथ्वी से टकराई थी, तब उसकी गति (वेलोसिटी) ३०००० से लेकर १५०००० मील प्रति घंटा के

लगभग रही होगी। उसकी यह प्रचंड भिड़ंत के कारण ही इतना बड़ा गड्ढा बन गया। यह तो खतरे का एक छोटा-सा संकेत मात्र था। ग्रीनलैंड में गिरा ही क्षुद्रग्रह-पिंड न्यूयार्क में अब भी प्रदर्शनार्थ रखा हुआ है।

आस्ट्रेलिया में २० लाख मील का ऐसा क्षेत्र है, जिसमें काँच के टुकड़े बिखरे पड़े हैं। इस क्षेत्र में कोई ज्वालामुखी नहीं है, फिर यह काँच कहाँ से आया, उसके बारे में वैज्ञानिकों का अनुमान है कि किसी समय यहाँ कोई भयंकर उल्का टूटकर गिरी होगी, उसकी सतह पर जल नहीं रहा होगा। दूसरी धातुओं के साथ काँच बहुतायत से पाया जाता होगा। वह जब पृथ्वी से आ टकराया होगा, तो उससे उस क्षेत्र में जीवन के लक्षण भी समाप्त हो गए होंगे। यह काँच के टुकड़े उसी से छितर गए होंगे। कई लोग यद्यपि उसे अंतरिक्ष लोक की किसी बुद्धिमान जाति द्वारा प्रक्षेपित शस्त्र भी मानते हैं, पर अब यह सिद्ध हो गया है कि वह कोई उल्का ही थी।

७२ वर्ष पूर्व ३० जून १९०८ की प्रातःकाल साइबेरिया तुंगूस बनखंड (साइबेरिया) में एक उल्का पिंड प्रबल वेग से आ टकराया। २५ वर्गमील क्षेत्र में सर्वत्र आग की लपटें फैल गईं। ३० वर्गमील क्षेत्र के भीतर जो भी मनुष्य, जीव-जंतु और वृक्ष थे, उनका नामोनिशान तक नहीं बचा था। अनुमान है कि वह एक हजार टन से भी वजनदार उल्का रही होगी। ३९ वर्ष बाद उसी घटना की पुनरावृत्ति तायगा क्षेत्र में हुई। १२ फरवरी को सबेरे १० बजकर ४० मिनट हो रहे थे, तभी एक क्षुद्रग्रह सुहोते आलिन की पहाड़ी से आ टकराया। उस आघात के फलस्वरूप ढाई वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में एक भी वृक्ष खड़ा दिखाई नहीं देता था। ऐसी विनाश लीला देखने को मिली। यहाँ से प्राप्त उल्का पिंड १७४५ किलोग्राम थी, वैज्ञानिकों ने अनुमान लगाया कि वह २५०० मन से भी अधिक उल्का थी। अधिकांश क्षुद्रग्रह छोटे होते हैं, इसलिए वे पृथ्वी पर

आते-आते या तो जलकर राख हो जाते हैं या फिर वह इस तरह टूट-फूटकर छितर जाते हैं कि उन्हें बीनकर इकट्ठा किया जाना भी संभव नहीं होता है। कुछ बड़े आकार के ही पिंडों के अवशेष बच पाते हैं और उन्हीं से आकाश की स्थिति के बारे में कोई अनुमान करना संभव होता है। इस दृष्टि से ३३.५ टन वजन की टूटी एक उल्का ग्रीनलैंड के अजायबघर में सुरक्षित है। उसका आयतन ११×७×५ फुट है। ये उल्काएँ अधिकांश वे क्षुद्रग्रह ही होते हैं, जो अपनी कक्षा से विचलित हो-होकर समीपवर्ती ग्रह-नक्षत्रों को उत्पीड़ित किया करते हैं।

अभी भी जब कभी भी आकाश में धूमकेतु तारे उदित होते हैं, तो मनुष्य जाति किसी भयंकर विस्फोट की आशंका से भयभीत हो उठती है, पर हम यह नहीं जानते कि सूर्य के भंडार में ऐसे क्षुद्रग्रह जिन्हें 'एस्टराइड' कहते हैं, असंख्य मात्रा में भरे पड़े है। वे भले ही छोटी-छोटी आँखों से दिखाई न देते हों, पर दुरबीनों ने उनकी उपस्थिति को असंदिग्ध कर दिया है और इस तरह एक प्रलय का खतरा हर क्षण हमारे मस्तिष्क पर मँडराया करता है और मनुष्य है कि ऊपरी दुनिया की इस भयानक हलचल की बात सोचता तक नहीं, केवल अपने पार्थिव-सुखों की मृगतृष्णा में ही भटकता रहता है। अनियमित ग्रह-कीटों की रचना भगवान ने लगता है मनोविनोद में पृथ्वीवासियों को समय-समय पर डराने के लिए और यह समझाने के लिए की है कि हमारा दृष्टिकोण अपनी क्षुद्र भावनाओं तक ही सीमित न रहे। बड़े ग्रह तो अपनी नियमितताओं और मर्यादाओं में बँधे हैं, इसलिए मनुष्य उनसे आँख मूँद सकता है, पर इन स्वेच्छाचारी विदूषकों से तो उसे डरना ही पड़ेगा। ये कभी भी हमला बोल सकते हैं और पृथ्वी को समूची नष्ट-भ्रष्ट कर सकते हैं।

इन क्षुद्रग्रहों की उत्पत्ति और जीवनकाल के संबंध में वैज्ञानिकों में उतना ही मतभेद है, जितना मनुष्य की उत्पत्ति और जीवनकाल

के संबंध में विद्वानों में मतभेद हैं। कुछ का अनुमान है कि दो ग्रहों की झड़प हुए टूट-फूट के कारण यह क्षुद्रग्रह बने हैं, क्योंकि यह गोलाकार ही नहीं, पेंदेनुमा और पहाड़ों की तरह के ऊबड़-खाबड़ किस्म के भी हैं। इनमें आकार-प्रकार की तरह आयु और कक्षा का भी कोई नियमित स्वरूप नहीं है। कुछ खगोलशास्त्रियों का मत है कि मंगल और बृहस्पति के बीच कोई ग्रह रहा होगा, उसके विघटन से यह सब बने होंगे। उनमें पाए गए तत्त्वों से अनुमान लगाया गया है कि अरबों वर्ष पूर्व भी आकाश में क्षुद्रग्रह थे। कभी यह निश्चित नहीं हो सका कि उनकी संख्या केवल घटती है या बढ़ती भी है, पर वैज्ञानिक उस लालच में अवश्य हैं कि जिस तरह मंगल ने फीबोस और डेइमोस नामक दो क्षुद्रग्रहों को, जो कुछ १० या २० मील व्यास वाले ही होंगे, अपनी अधीनता में रखकर शोभा बढ़ाई है। उसी प्रकार कुछ क्षुद्रग्रहों को लाकर पृथ्वी में 'पार्ट टाइम' सूर्य या चंद्र प्रकाश की व्यवस्था की जाए। ऐसे अधीनस्थ ग्रह शनि के पास भी हैं, बृहस्पति के पास तो उनकी संख्या सात है।

अंतरिक्ष की विलक्षण दुनिया में इन अंतरिक्ष-कीटों की विलक्षणता और भी रहस्यमय है। जब उनके अस्तित्व के बारे में कोई तुक नहीं बैठती, तो यही मानना पड़ता है कि वह सब भगवान का मनोरंजन है और इस मनेरंजन में ही वह लोगों को दुष्कर्म न करने के लिए डराता भी रहता है, दंड भी देता रहता है।

अंतरिक्ष के ये क्षुद्र ग्रह

अपने सौरमंडल में जो ग्रह हैं उनके बारे में सहस्रों वर्षों से खोजा और जाना जा रहा है, पर कुछ ही समय पूर्व क्षुद्र-ग्रहों की पट्टी देखने में आई है, जो अपने बिलकुल समीप है और जिनकी संख्या आश्चर्यजनक है। उनकी जो जानकारियाँ मिली हैं, वे जितनी आश्चर्यजनक हैं, उतनी ही शिक्षाप्रद भी।

सूर्य के समीपवर्ती ग्रहों में बुध, शुक्र, पृथ्वी और मंगल को गिना जा सकता है। दूरवर्ती शनि, युरेनस और नेपच्यून हैं। बृहस्पति मध्यवर्ती है। दूरवर्ती वर्ग के तीनों ग्रह अपेक्षाकृत समीप हैं, इसी प्रकार निकटवर्ती चार ग्रहों का फासला भी आपस में कम है। इन्हें दो गुटों में बँटा हुआ कह सकते हैं। बृहस्पति बीच में अकेला पड़ता है। उसकी दूरी दोनों ही वर्गों से काफी अधिक है। बीच के सुविस्तृत अंतरिक्ष में यह अकेला ही अपना आधिपत्य जमाए हुए है।

समीपवर्ती वर्ग के ग्रहों में अंतिम मंगल है। उससे बृहस्पति की दूरी पैंतीस करोड़ मील है। इस सुविस्तृत क्षेत्र को पहले खाली पड़ा हुआ समझा जाता था, पर अब जान लिया गया है कि उस विशाल-विस्तार वाले आकाश पर सूर्य के बौने बेटों का अधिकार है और वे वहाँ आनंदपूर्वक निवास करते हैं। सूर्य के इन बोने बेटों को क्षुद्रग्रह, लघुग्रह, अवांतर ग्रह और एस्ट्रायड कहा जाता है।

इनका पता पहले-पहले सिसली की वेधशाला ने सन् १८०१ में लगाया। उसके अध्यक्ष प्रो० पियाज्जी ने एक छोटा तारा मंगल और बृहस्पति के बीच में घूमते देखा और उसका नाम सिसली की देवी के नाम पर 'सैरस' रख दिया। इसके बाद दुरबीनों से एक के बाद दूसरा लघुग्रह पहचानना आरंभ कर दिया। हेनरिख, ओल्बेर्स, प्लास, जूनी, वेत्ता आदि नाम उन्हें दिए गए। जो पकड़ में आते गए उन्हें रोमन, ग्रीक, जर्मन, नार्वेजियन, देवी-देवताओं के नाम पर संबोधित किया जाता रहा, पीछे वे इतनी बड़ी संख्या में देखे गए कि नामकरण का उत्साह ही ठंढा पड़ गया। खगोलशास्त्री रिचर्डसन के समय तक वे ४४ हजार की संख्या में गिन लिए गए थे। अब रूसी वैज्ञानिकों ने उनकी संख्या एक लाख से भी अधिक सिद्ध कर दी है।

ये लघुग्रह कौन हैं ? क्या हैं ? आदि प्रश्नों का सही उत्तर ढूँढ़ने में खगोलशास्त्री गंभीरतापूर्वक संलग्न हैं। इस शोध में संलग्न ओल्वेर्स, हाइडेलवर्ग एवं ओर्ट का कथन है कि अति प्राचीनकाल में मंगल और बृहस्पति के बीच दो पूर्ण ग्रह भ्रमण करते थे। वे एक बार आपस में टकरा गए और उनका चूरा छितराकर इन लघुग्रहों के रूप में बिखर गया और नियत कक्षा में सूर्य की परिक्रमा करने लगे।

ये लघुग्रह बहुत छोटे-छोटे हैं। इनमें कुछ बड़े हैं। सीरीज का २५०९ और पलास का व्यास ५०० किलोमीटर है। सैरस का ४२७, वेस्ता का ४००, जूनो का २०० और ईरोस का १५ मील व्यास है। इससे भी छोटों में आमीर ५ मील का, एलबर्ट और जेबी का तीन-तीन मील है। एक-एक मील के व्यास के तो हजारों हैं। इनसे भी छोटों को ठीक तरह गिना और नापा नहीं जा सका है। जो जितना छोटा है, उसकी अपनी आकर्षण शक्ति भी कम है और वह दूसरों के खिंचाव से उतना ही कम बँधा होता है। अस्तु, इनकी उच्छृंखलतापूर्वक किधर भी दौड़ पड़ने की आशंका सदा ही बनी रहती है। अकसर वे अपना नियत निर्धारित मार्ग छोड़कर पथभ्रष्ट होते रहते हैं।

इन्हीं में से मनचला सूर्य का बौना बेटा सन् १९०८ में धरती की सैर करने चल पड़ा था। बेचारा पृथ्वी के वायुमंडल में घुसते ही बुरी तरह जल गया गया और उसका ढाँचा साइबेरिया के जंगल में जा गिरा। यह कंकाल एक हजार फुट व्यास के एक उल्का-पिंड के रूप में था। यह जहाँ गिरा वहाँ गहरा खड्ड बना दिया और समीपवर्ती क्षेत्र में भयंकर अग्निकांड खड़ा कर दिया।

इनमें से कुछ क्षुद्रग्रहों ने अपनी विचित्र भ्रमण कक्षाएँ बना ली हैं। एरोस पृथ्वी के पास डेढ़ करोड़ मील समीप आ पहुँचता है और उसकी प्रचंड आकर्षण शक्ति से डरकर फिर वापस लौट जाता है। किसी दिन आगे बढ़ने की हिमाकत की, तो उसकी भी

प्रदर्शन की मूर्खता से बचाकर किसी उपयोगी काम में लगाया जा सकता है।

अपने सौरमंडल के प्राय: सभी ग्रह हमें दिखाई देते हैं। सूर्य को छोड़कर वे जरा-जरा से जुगनूँ जैसे दीखते हैं। यद्यपि वे पृथ्वी से भी बहुत बड़े हैं। उनका बड़प्पन देखने की न तो हमारी रुचि है और न आवश्यकता। वे अपनी जगह बड़े या छोटे जैसे भी हों, वैसे बने रहें, हम अपने कार्यों में व्यस्त हैं, अपनी समस्याओं में उलझे हैं। उनके बड़प्पन को देखने, जानने पर भी हम क्यों और किसलिए प्रभावित होंगे?

बृहस्पति सौरमंडल का सबसे बड़ा ग्रह है। इतना बड़ा कि सभी ८ ग्रह उस अकेले में समा जाएँ। वह पृथ्वी से १६०० गुना बड़ा है और उससे ६० करोड़ मील दूर है। इस दूरी की तुलना में बेचारा चंद्रमा जो सिर्फ २ लाख मील है, बगल में बैठा हुआ प्रतीत होगा।

बृहस्पति की आकर्षण शक्ति इतनी है कि धरती पर रहने वाला कोई डेढ़ मन वजन का मनुष्य वहाँ जाकर ४ मन भारी हो जाएगा। वह अपनी धुरी पर अत्यंत द्रुत गति से घूमता है। यह चाल अन्य सब ग्रहों से अधिक है। वहाँ पाँच घंटे का दिन और पाँच घंटे की रात होती है। वहाँ पहले अंतरिक्षयात्री चंद्रमा 'सीरस' पर सवारी गाँठेंगे और वहीं से खोज-बीन आरंभ करेंगे। जब आवश्यक जानकारियाँ प्राप्त हो जाएँगी तभी बृहस्पति पर उतरेंगे।

बृहस्पति का व्यास ८८ हजार मील है। उस पर हजारों मील मोटी गैस के बादलों की परत छाई हुई है। सूर्य से ४८ करोड़ ३० लाख मील दूर होने के कारण वहाँ गरमी पहुँचाने वाली किरणें बहुत स्वल्प मात्रा में पहुँचती हैं, इसलिए वह अत्यधिक ठंढा है। अन्य ग्रह सूर्य के समीप हैं। हमारी पृथ्वी मात्र सवा नौ करोड़ मील दूर है। मंगल १४.७५ करोड़ मील, शुक्र ६.७५ करोड़ मील और

वही दुर्गति होगी, किंतु पृथ्वी को भी उस टक्कर से कम नुकसान नहीं पहुँचेगा। हाइडाल्गो को शनि का धाई छूने का शौक चर्राया है। वह वहाँ तक पहुँचता तो है, पर उस महादैत्य द्वारा निगल लिए जाने की आशंका से डरकर वह भी वापस लौट आता है। इकारत इन सबसे ढीठ है, वह सूर्य और बुध के बीच के भयंकर गरम क्षेत्र में घुस पड़ता है। किसी दिन उसकी भी शामत आई ही रखी है। एक बार तो उसने पृथ्वी से टकराकर आत्महत्या करने की ठान ली थी। सन् १९६८ का मुहूर्त्त उसे इसके लिए अच्छा नहीं लगा और कुछ सोच-समझकर वापस लौट गया। इससे पूर्व सन् १९३७ में हर्मेस भी पृथ्वी के बिलकुल नजदीक पाँच लाख मील पर ही आ धमका था, पर उसकी अकाल मृत्यु भी किसी प्रकार टल गई।

चंद्रमा पर वायुमंडल नहीं है, इसलिए वहाँ जलने का खतरा न होने के कारण ये ग्रह टकराकर वहाँ गहरे खड्ड कर देते हैं, पर इसमें उनका अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है। चंद्रमा को कुरूप तो इनने बनाया पर किसी का कुछ बिगाड़ने से अपना भी कुछ भला नहीं होता, यह इन ग्रहों से सीखा जा सकता है। दूसरे का बिगाड़ करने में इनने सफलता भले पा ली हो, पर ये अपना अस्तित्व भी तो गँवा बैठे।

प्रदर्शन और उद्वेग भी क्षुद्रता

कोई अपने मन में कितना ही बड़ा क्यों न हो! उसके साधन कितने ही अधिक क्यों न हों, उसका यह बड़प्पन उनसे अपने तक ही सीमित रहेगा। दूसरे अपने कामों में व्यस्त हैं। किसी का बड़प्पन नापने और उससे प्रभावित होने की किसी को फुरसत नहीं, इस तथ्य को यदि लोग समझ लें, तो कम-से-कम प्रदर्शन और ठाठ-बाट के नाम पर जो धन, समय एवं चिंतन नष्ट होता रहता है, उसकी सहज ही बचत हो सकती है और उस क्षमता को शान-वान की, बड़प्पन-

बुध ३.५ करोड़ मील है। अत्यधिक दूरी होने के कारण सूर्य साम्राज्य में रहते हुए भी वह बहुत बातों में आत्मनिर्भर है। उसे पूरा औपनिवेशिक स्वराज्य मिला हुआ है। कामनवेल्थ का वह सम्मानित सदस्य होते हुए भी अपने बलबूते पर ही अपना क्रिया-कलाप चलाता है।

गैस, बादलों की मोटी परत के नीचे बृहस्पति पर बरफ की मोटी परत जमी है। उस पर कभी-कभी ३० हजार मील लंबे और ७ हजार मील चौड़े लाल धब्बे दिखाई देते हैं। अनुमान यह है कि यह उसमें ज्वालामुखी फटते रहने और उनके लावा उगलने के कारण दिखाई पड़ते हैं।

वृहस्पति के अनेक छोटे-बड़े चंद्रमा है। इनमें से अभी १२ देखे-जाने जा सके हैं। इनके नाम कोलस्टा, जेनिमेद्र, इव, योरोपा, एमस्मिया आदि हैं। सोचा जा रहा है कि जब सौरमंडल की यात्रा पर निकला हुआ मनुष्य बृहस्पति की खोज पर जाएगा, तब पहले उसे इन्हीं में से किसी चंद्रमा पर रुककर अपनी खोज आरंभ करनी होगी और वस्तुस्थिति का पता लगाने के बाद उस धरती पर पैर रखने की हिम्मत करनी होगी। शनि के ९, यूरेनस के ५, नेपच्यून के २ चंद्रमा हैं। २० अरब ७२९ करोड़ मील की यात्रा का साधन जुटाकर जब सौरमंडलीय यात्रा आरंभ होगी, तब यह चंद्रमा ही मूल ग्रहों पर उतरने के प्रथम सोपान होंगे। उस यात्रा का सबसे अंतिम ग्रह प्लूटो होगा, वह आकार में तो पृथ्वी के ही बराबर है, पर सूर्य से इतनी अधिक दूर है कि वहाँ से उसका प्रकाश टिमटिमाती मोमबत्ती जितना ही दिखाई देगा। हमारी पृथ्वी का जीवन प्राण सूर्य, प्लूटो को अपने अस्तित्व भर की जानकारी देने वाला एक छोटा-सा दीपक भर लगेगा।

ऊपर की पंक्तियों में बृहस्पति की विशालता की उपलब्ध जानकारी का थोड़ा-सा अंश दिया गया है। अभी और भी बहुत कुछ ऐसा जानना-बताना शेष है, जो उस विशाल ग्रह के वैभव को प्रकट

कर सके। यदि हमारी ही तरह ओछी बुद्धि का बृहस्पति ग्रह होगा, तो सोचता होगा कि सौरमंडल के सारे ग्रह उसकी धाक मानेंगे और पृथ्वी आदि ग्रहों पर रहने वाले प्राणी निरंतर उसका नमन-वंदन करेंगे, पर ऐसा होता कहाँ है ? हमें किसी के बड़प्पन या छोटे होने से क्या लेना-देना? हमारी अपने छोटेपन या बड़प्पन की समस्याएँ ही क्या कम सिरदरद है, जो दूसरों का लेखा-जोखा लेने में माथापच्ची करें।

कल्पना की जा सकती है कि जिस प्रकार बृहस्पति का बड़प्पन हमें थोड़ा कुतूहल भर देता है, उसके वैभव से हम तनिक भी प्रभावित नहीं हैं। इसी प्रकार कोई व्यक्ति धन-वैभव का प्रदर्शन करने के लिए खरचीला ठाठ-बाट बनाए और सोचे कि देखने वाले उसकी शान-शौकत देखकर अवाक् रह जाएँगे, तो इस प्रकार का सोचना सर्वथा ओछेपन और बचकानापन ही कहा जाएगा। लोग अपने कामों में व्यस्त हैं, हमें अपने महत्त्वपूर्ण कार्यों में उस शक्ति को नियोजित करने में लगा रहना चाहिए, जो खरचीला और बेकार का आडंबर बनाने में अकारण नष्ट होती रहती है।

यह ब्रह्मकीट धूमकेतु

प्रकाश की लंबी रेखा बुहारी की तरह पूँछ वाला एक तारा कभी आकाश में दिखाई दे जाता है, तो भारतवर्ष ही नहीं, सारे विश्व में बेचैनी फैल जाती है। यह तारा जिसे धूमकेतु या पुच्छल तारा कहते हैं, अनिष्ट और अशुभ का सूचक माना जाता है। जब भी यह निकलता है, तो लोग युद्ध, अकाल, महामारी जैसी आशंकाओं से भयभीत हो उठते हैं। पुच्छल तारा मानव जाति के लिए व्याधि और विनाश का ही प्रतीक माना जाता है।

यह पुच्छल तारा साधारण मनुष्यों के लिए ही भय और आश्चर्य का विषय नहीं रहा, वैज्ञानिकों ने भी उसे बड़े कुतूहल की दृष्टि से देखा है। अनेक वैज्ञानिक उसकी विशद जानकारी करने के लिए

प्रयत्नशील रहे हैं। प्रसिद्ध खगोलविद् न्यूटन, जिनका मस्तिष्क पिंडीय जगत में सदैव भ्रमण किया करता था—गुरुत्वाकर्षण जैसा सिद्धांत उन्होंने ही बनाया था, ने धूमकेतुओं के अनेक आश्चर्यों की खोज की। टाइकोब्राहे और डा० हेली ने धूमकेतु ताराओं का विशेष अध्ययन किया और कहा—"प्रकृति के अनेक रहस्यपूर्ण करतबों में से एक यह धूमकेतु भी है। इसकी आकृति, प्रकृति, गुण, कर्म और निवास-विश्राम का उसी प्रकार कुछ ठिकाना नहीं, जिस प्रकार आज के भारतीय साधुओं का। चाहे जब, चाहे जहाँ निकल पड़ते हैं और निरुद्देश्य इधर-उधर लोगों से टकराते रहते हैं।"

कभी-कभी दिखाई देने वाले इन धूमकेतुओं की संख्या कम नहीं, हजारों की संख्या में हैं तथा सूर्य के आस-पास और सौरमंडल के बाहर भी चक्कर काटते रहते हैं। हमें जो धूमकेतु दिखाई देते हैं, वह सब शंकर की जटाओं से एकाएक प्रादुर्भूत पुत्रों की तरह सूर्य की संतानें हैं। वह किस तरह पैदा हो जाते हैं, इस संबंध में कोई निश्चित जानकारी नहीं है, पर अब तक सूर्य के ऐसे ३२ प्रकाश-पुत्रों का पता चला है। आज्ञाकारी पुत्र की तरह यह भी सूर्य की ही परिक्रमा लंबे वृत्त में किया करते हैं। हेल, फाये, ओल्बेरस, ब्रोरसेन, इन्के, टूटल आदि धूमकेतु ३ वर्ष से लेकर १०० वर्ष की अवधि में सूर्य की परिक्रमा कर लेते हैं। कुछ धूमकेतु १५० वर्ष तक में सूर्य की परिक्रमा पूरी करते हैं। जब कभी ये पृथ्वी के वायुमंडल में आ जाते हैं, हमें दिखाई देने लगते हैं। हैले धूमकेतु तो हर ७६ वर्ष बाद आता रहता है। पहले वह १९१० ई० में तब आया था जब प्रथम विश्वयुद्ध की तैयारियाँ भी हुई थीं। इसी से लोग अनुमान लगाते थे कि पुनरागमन पर तृतीय विश्वयुद्ध की तैयारियाँ हों, तो कुछ आश्चर्य नहीं। संभव है, तब मानव जाति पर बड़े संकट आएँ। पर यदि ऐसा हुआ, तो आगे का संसार एक नए अध्याय से ही प्रारंभ होगा, जिसमें सब लोग प्रेम, मैत्री, सहयोग और सहानुभूति

का व्यवहार करते हुए सुखी रहेंगे। अनैतिकता और अनाचार का कूड़ा-करकट इस दाह-क्रिया में ही जल-भुन जाएगा, विनाश की आशंका के साथ वह शुभ शगुन भी निश्चित रूप से जुड़ा अनुभव किया जाना चाहिए।

यों धूमकेतु कोई ऐसा दानव नहीं, जो मनुष्यों की तरह मार-काट मचाता हो। यह भी गैस, खनिज चट्टानों तथा हिमकणों से बने विचित्र प्रकार का तारा ही है। सबसे आश्चर्यजनक इसकी पूँछ है, जिसकी लंबाई लाखों-करोड़ों मील तक नापी गई है। १८११ ई० में धूमकेतु दिखाई दिया था, उसकी पूँछ १० करोड़ मील लंबी थी, जबकि १८४३ ई० में जो धुमकेतु दिखाई दिया था, खगोलशास्त्रियों के अनुसार उसकी पूँछ की लंबाई १५ करोड़ मील से भी बड़ी थी।

कई धूमकेतु कई पूँछ वाले भी होते हैं। आकाश में इतनी दूर तक फैली हुई पूँछ के बीच से फाड़कर पृथ्वी और दूसरे ग्रह अपनी परिक्रमाएँ करते रहते हैं। संभव है, पूँछ में पाई जाने वाली गैसें अदृश्य रूप से लोगों के मस्तिष्क और शरीर में ऐसी प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न करती हों, जिनसे शरीर और सामाजिक जीवन में दूषित तत्त्वों की अभिवृद्धि होती हो और इसी से यह अनिष्टकारक समझे जाते हों, पर ऐसा कोई कारण दिखाई नहीं देता, जो बलात् मनुष्य की इच्छाशक्ति को मोड़ सकता हो या विध्वंस उपस्थित कर सकता हो। इसकी आकृति ही भयंकर होती है। भार तो बहुत ही कम होता है इसलिए इनसे टकराने का कोई भय नहीं रहता। दक्षिण अफ्रीका में कुछ ऐसे जंतु पाए जाते हैं, जो दुश्मन को देखकर ऐसी भयंकर आकृति बना लेते हैं कि दुश्मन उसे देखते ही भयभीत हो जाता है और वहाँ से भाग जाता है। अपनी इस डराने वाली कला के द्वारा वह अपनी जीवन-रक्षा कर लेता है। संभव है कि प्रकृति ने धूमकेतु नामक इस ब्रह्मकीट को इसीलिए उत्पन्न किया हो कि उसकी

दानवी आकृति से लोग डरें और सनातन नियमों का—यथा दया, क्षमा, उदारता आदि की रक्षा करें, एकदूसरे के प्रति द्वेष-दुर्भाव और मलिनताएँ न रखा करें। वैसे इसका भार पृथ्वी के भार से करोड़ों गुना कम अर्थात नगण्य जैसा ही होता है, जबकि लंबाई के अनुपात में उन्हें कई अरब टन का होना चाहिए था।

खगोलशास्त्रियों ने अनुमान लगाकर बताया है कि एक कमरे की एक घन इंच हवा में जितना पदार्थ होता है, धूमकेतु की पूँछ में उतना पदार्थ एक घन मील में होता है। चमक तो गैसों की होती है। इसका सिर भी उतने भार का नहीं होता, जितना दिखाई पड़ता है। यह छोटी-छोटी गोली के आकार जैसे धूलकणों से बना होता है और यह टुकड़े भी एक घन मील में कोई सौ-पचास की ही संख्या में होते हैं।

सिरा सूर्य की ओर और पूँछ विपरीत दिशा में ऐसा लगता है, जैसे सूर्य अपनी इच्छाशक्ति से उसे धकेल रहा हो। सूर्य से वह बहुत दूर रहकर चक्कर काटता है। यह दूरी ४० करोड़ मील तक होती है। सन् १८४३ ई० में जो धूमकेतु दिखाई दिया था, वह सूर्य के ४९ हजार मील पास तक चला गया था। इससे पहले ३ करोड़ मील की दूरी तक ही वह आ पाया था। धूमकेतु जब सूर्य के पास आता है, तभी उसकी पूँछ चमकती और लंबी होती दिखाई देती है। सूर्य का प्रकाश पड़ने के कारण ही ऐसा होता है। जैसे-जैसे वह दूर हटता है, पूँछ छोटी होती हुई बाजीगर के खेल की तरह सिर में ही लुप्त हो जाती है। कई बार यह पूछें दूसरे ग्रह-पिंडों के संपर्क में आकर उधर ही आकर्षित होकर नष्ट हो जाती है। इससे यदि यह कहा जाए कि धूमकेतुओं के विकिरण का अदृश्य प्रभाव प्राणीय जीवन पर पड़ सकता है, तो उसे नितांत असत्य नहीं मानना चाहिए।

धूमकेतु केवल सूर्य की संतान हों, ऐसी बात नहीं; नवग्रहों में कई के पास ये संतानें हैं। शनि धूमकेतुओं की संख्या ६, नेपच्यून की

८ है। इसी प्रकार बृहस्पति के घर में अनुमानतः १८ पुच्छल तारे चक्कर काटते रहते हैं।

विनोदप्रिय भगवान अपने इस कौतुकमय मनोरंजन के द्वारा मनुष्य को कितनी ही शिक्षाएँ देता है ? उनमें सर्वप्रधान यही है कि क्षुद्रता, बड़प्पन, प्रदर्शन और उद्वेग तो इन छोटे-छोटे ग्रहों के समान नष्ट हो ही जाते हैं, बृहस्पति ग्रह की तरह मनुष्य बड़ा होने पर भी व्यर्थ और निरुपयोगी इकाई मात्र रह जाता है। लाखों-करोड़ों मील लंबी पूँछ वाले ब्रह्मकीट धूमकेतुओं को ब्रह्मदंड की तरह प्रयोग कर वह डराता-धमकाता भी है। इतने पर भी मनुष्य नहीं मानता और अपनी गतिविधियों को नहीं सुधारता, तो इसे 'विनाशकाले विपरीत बुद्धि' ही कहा जाएगा।

संसार चक्र की गति यही है कि जो प्रकृति के नियमों, व्यवस्थाओं को चुनौती देता है, उसे उन ग्रहों की तरह ही नष्ट होना पड़ता है। प्रकृति की नियम-व्यवस्था ईश्वरीय विधि-विधान को समझकर अपने आचरण, व्यक्तित्व को तदनुरूप ढाला जाए तथा इस गति-प्रगति के चक्र का अनुकरण करते हुए विकास किया जाए। संसार कितना ही विस्तृत क्यों न हो। ब्रह्मांड कितना ही विशद और व्यापक क्यों न हो, उसमें कहीं भी अनियमितता, अव्यवस्था नहीं है। सब कुछ शांत, स्थिर और सुव्यवस्थित ढंग से चल रहा है।

इस व्यवस्था, ईश्वरीय विधान को समझकर ही व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में उन्नति-प्रगति कर पाना संभव है। इसके विपरीत प्रकृति की नियम मर्यादा की अवहेलना करने पर तो पतन के गर्त में ही गिरना पड़ता है।

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा